नवम्बर–दिसम्बर 2018

आई.एस.ओ. 9001: 2008 संगठन
मूल्य: ₹30

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

इस अंक में

स्ट्रॉबेरी से पौष्टिकता के साथ लाभ

गृहवाटिका है स्वास्थ्य एवं पोषण का आधार

लहसुन की फसल में जल की बूंद-बूंद कीमती

गुलाब के बहुउपयोगी परिरक्षित उत्पाद

सफलता गाथा

समेकित कृषि प्रणाली से बने सक्षम किसान

कमल कुमार पाण्डे, हरीश चन्द्र जोशी और **नवल किशोर सिंह**
कृषि विज्ञान केन्द्र
भाकृअनुप-विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, काफलीगैर-263628, बागेश्वर (उत्तराखण्ड)

फल एवं सब्जी आधारित समेकित कृषि प्रणाली में फल व सब्जी उत्पादन पर अधिक जोर देते हुए अन्य उपक्रमों के साथ सामंजस्य बैठाते हुए समेकित कृषि प्रणाली के अंतर्गत कार्य किया जाता है। इससे आय में वृद्धि के साथ कृषि प्रणाली टिकाऊ बनी रहती है। कृषक, विशेषकर पर्वतीय कृषक मौसम, बाजार व अन्य कारकों के उतार-चढ़ाव का सामना करते हुए एक सक्षम किसान के रूप में सफलता प्राप्त कर पाता है। ऐसे ही एक सक्षम किसान हैं जनपद बागेश्वर, उत्तराखण्ड के पालड़ी गांव निवासी श्री नंदन सिंह, जिनकी सफलता यात्रा अन्य कृषकों को प्रेरणा प्रदान करने के लिए प्रस्तुत है।

श्री नंदन सिंह उत्तराखण्ड में बागेश्वर जनपद के एक छोटे से पर्वतीय गांव पालड़ी के निवासी हैं। इनके पास 1.6 हैक्टर भूमि है। पूर्व में ये मुख्यतया धान्य फसलों जैसे गेहूं, धान, मंडुआ, मादिरा, मसूर, भट्ट, गहत आदि की खेती करते थे। इनके अतिरिक्त वे कुछ मात्रा में आलू व गडेरी (वंडे से मिलती-जुलती पर्वतीय सब्जी) की खेती कर विक्रय करते थे। गांव में सिंचाई के साधनों की कमी थी। इससे वर्षा आधारित स्थिति में परंपरागत रूप से की गई इन फसलों की पैदावार भी कम ही रहती थी। श्री नंदन खेती तो कर रहे थे पर इसमें पर्वतीय कृषि के अनुरूप सैद्धांतिक तकनीकों का अभाव था। इससे आय अपेक्षाकृत कम मिला करती थी (सारणी-1)।

जनपद बागेश्वर में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत कार्यरत विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा के कृषि विज्ञान केन्द्र, काफलीगैर के संपर्क में श्री नंदन सिंह आए। यहां के विशेषज्ञों की सलाह और तकनीकी परामर्श के अनुरूप उन्होंने अपनी कृषि को समेकित रूप देते हुए फलों व सब्जी फसलों का क्षेत्रफल बढ़ाया और पॉलीहाउस स्थापित किया। इसके साथ फल उत्पादन, दुग्ध उत्पादन, मत्स्य पालन, मधुमक्खी पालन एवं मशरूम उत्पादन का कार्य भी करने लगे। इस कार्य में इन्होंने अन्य विभागों जैसे कृषि, उद्यान एवं मत्स्य आदि का भी भरपूर सहयोग लिया। इसका परिणाम बहुत ही उत्साहवर्द्धक रहा और श्री नंदन सिंह की उसी 1.6 हैक्टर भूमि से आय दोगुनी से भी कहीं ज्यादा हो गई।

समेकित कृषि प्रणाली के अंतर्गत फल उत्पादन

श्री नंदन सिंह द्वारा सब्जी आधारित समेकित कृषि प्रणाली को अपनाने से पूर्व व बाद की स्थिति तथा वर्तमान मूल्य पर आय में हुए परिवर्तन का विभिन्न कृषि उपक्रमों के अनुसार वर्णन निम्नलिखित है:

फल उत्पादन

फल एवं सब्जी आधारित समेकित कृषि प्रणाली अपनाने से पूर्व श्री सिंह 0.20 हैक्टर क्षेत्रफल पर ही फलों का उत्पादन करते थे। इनमें मुख्य रूप से आड़ू, खुबानी, माल्टा व नीबू के फलवृक्ष शामिल थे। यदि वे अभी भी इतने ही क्षेत्रफल पर पुरानी ही तकनीकों से फल उत्पादन कर रहे होते, तो उन्हें वर्तमान मूल्यों के अनुसार मात्र 25,000 रुपये की कुल आय व 14,500 रुपये की शुद्ध आय प्राप्त हो रही होती।

बढ़ती आमदनी

श्री नंदन सिंह ने वक्त के मिजाज को समझ और कृषि विज्ञान केन्द्र की तकनीकी सलाह और उद्यान विभाग के सहयोग से न केवल फलवृक्षों का क्षेत्रफल बढ़ाया बल्कि फलवृक्षों का प्रबंधन भी वैज्ञानिक तकनीकों से किया। इसके परिणामस्वरूप आज श्री सिंह अपने फल उद्यान से आड़ू, खुबानी, नाशपाती, नीबू, माल्टा, आम, लीची व अनार की खेती कर 1,05,000 रुपये की कुल व 74,800 रुपये की शुद्ध आय अर्जित कर रहे हैं। यह स्थिति तब है, जब अधिकांश फलवृक्ष अपनी पूर्ण फलत में नहीं आए हैं।

फसल उत्पादन

पहले श्री सिंह अपनी अधिकांश कृषि भूमि पर परंपरागत बीजों व तरीकों से खाद्यान्न फसलों जैसे धान, मंडुआ, गहत,भट्ट, गेहूं, मसूर आदि का उत्पादन करते थे। इस उपक्रम का क्षेत्रफल अधिक होने के कारण उत्पादन अधिक था और उनके वर्षभर के खाद्यान्न की पूर्ति भी हो जाती थी। इसमें से लगभग आधा हिस्सा बेचकर वे कुछ आय भी प्राप्त कर लेते थे। परंतु उन्नत बीजों व तकनीकों के अभाव के कारण उत्पादकता कम थी। कृषि विज्ञान केन्द्र के संपर्क में आने के पश्चात श्री सिंह ने उन्नत बीजों का प्रयोग संतुलित खाद एवं उर्वरक प्रबंधन द्वारा करना शुरू किया। इससे इन फसलों की उत्पादकता बढ़ गई। वर्तमान में इस उपक्रम में पूर्व से लगभग एक तिहाई क्षेत्रफल रहने के बावजूद भी इनकी खाद्यान्न आवश्यकता पूरी हो जाती है। इसके अलावा बागवानी फसलों को बेचकर वे खाद्यान्न फसलों की तुलना में कहीं अधिक आय अर्जित कर रहे हैं।

पर्वतीय परिदृश्य में समेकित कृषि प्रणाली कृषक को सबल प्रदान करती है। बाजार के उतार-चढ़ाव के बीच कृषक का मजबूत सहारा बनती है। वहीं बीच कृषक का मजबूत सहारा बनती है। दूसरी ओर इन फसलों के अवशेष

आवरण पृष्ठ III पर जारी

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की
लोकप्रिय द्विमासिकी

वर्ष : 39, अंक : 6

नवम्बर–दिसम्बर 2018

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. अशोक कुमार सिंह** — **अध्यक्ष**
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. सतेन्द्र कुमार सिंह** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक
   कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. आर.सी. गौतम** — **सदस्य**
   पूर्व डीन
   भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. **डा. एस.के. सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग
   नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. **डा. वाई.पी.एस. डबास** — **सदस्य**
   निदेशक (प्रसार)
   जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
   पंतनगर
6. **श्री सेठपाल सिंह** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
7. **श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री अशोक सिंह** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक : **अशोक सिंह**

संपादन सहयोग : **सुनीता अरोड़ा**

प्रधान प्रोडक्शन अधिकारी : **डा. वीरेन्द्र कुमार भारती**

तकनीकी अधिकारी : **अशोक शास्त्री**

लेआउट डिजाइन
डा. वीरेन्द्र कुमार भारती
अशोक शास्त्री

व्यवसाय सम्पर्क सूत्र
सुनील कुमार जोशी
व्यवसाय प्रबंधक
दूरभाष: 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12

एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00

E-mail : phalphul@gmail.com

विषय सूची

संपादकीय बागवानी फसलों का बढ़ता उत्पादन, अशोक सिंह

3 फलोत्पादन

स्ट्रॉबेरी से पौष्टिकता के साथ लाभ
महेश चौधरी, अनोप कुमारी, संतोष चौधरी और रागिनी राणावत

8 बगिया

गृहवाटिका है स्वास्थ्य एवं पोषण का आधार
दुर्गा प्रसाद महाराणा, डी.आर. भारद्वाज, आनंद कुमार सिंह, रमेश कुमार सिंह, के.के. गौतम और बिजेन्द्र सिंह

13 कृषक अनुभव

लहसुन की फसल में जल की बूंद-बूंद कीमती
डा. रामराज मीणा और डा. राजेश कुमार बागड़ी

14 उपयोगिता

गुलाब के बहुउपयोगी परिरक्षित उत्पाद
बिबवे भूषण, मनोज कुमार महावर, पंकज कुमार कनौजिया, कीर्ति जलगांवकर, भारत भूषण और विजय सिंह मीणा

17 स्वरोजगार

ऑयस्टर मशरूम का उत्पादन
मनोज कुमार पाण्डेय, अभय कुमार सिंह, अजय तिवारी, नीरज सिंह और बिजेन्द्र सिंह

20 आमदनी

अनार में बहार नियमन से शुष्क क्षेत्रों में आय बढ़ाएं
रमेश कुमार, पी.एल. सरोज और बी.डी. शर्मा

24 पुष्प सुरक्षा

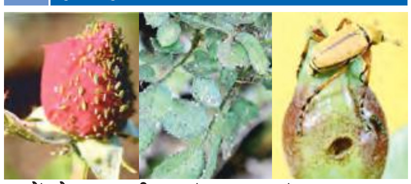

फूलों के मुख्य कीट एवं उनका प्रबंधन
ऋतु जैन और बबीता सिंह

28 प्रसंस्करण

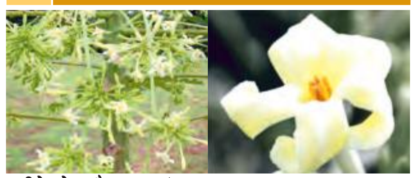

पपीते से पपैन बनाएं
सरिता साहू, जे.पी. हरिनखेरे और पुष्पलता तिर्की

34 उत्पादकता

बेर से बैर कैसा?
एस.एस. शर्मा, आर.पी. शर्मा, एस.एस. राव और ए.आर.के. पठान

38 संसाधन संरक्षण

आम में टपक सिंचाई और पोषण प्रबंधन से अधिक लाभ
तरुण अदक, कैलाश कुमार और विनोद कुमार सिंह

41 मसाला

बड़ी इलायची: सिक्किम के किसानों की आजीविका का मुख्य आधार
आशुतोष गौतम, बी.ए. गुड्दे, के. धनपाल, शशांक शेखर बोरा, ए.बी. रमाश्री और रायल छेत्री

44 जानकारी

नवंबर-दिसंबर में बागों के आवश्यक कृषि कार्य
राम रोशन शर्मा और हरे कृष्णा

आवरण II और III

सफलता गाथा: समेकित कृषि प्रणाली से बने सक्षम किसान
कमल कुमार पाण्डे, हरीश चन्द्र जोशी और नवल किशोर सिंह

डिस्क्लेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं, उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। लेखों में संस्तुत कीटनाशकों तथा अन्य रसायनों के प्रयोग से पूर्व विशेषज्ञों से सलाह लें।

संपादकीय

बागवानी फसलों का बढ़ता उत्पादन

देश में लगातार छठे वर्ष यानी 2017-18 में भी खाद्यान्न फसलों की तुलना में बागवानी फसलों की उपज में अधिक वृद्धि देखने को मिली है। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार फलों और सब्जियों का उत्पादन इस वर्ष 307 मिलियन टन रहा है। यह गत वर्ष के खाद्यान्न उत्पादन के मुकाबले 27 मिलियन टन अधिक है। निस्संदेह इस उपलब्धि का श्रेय देश के किसानों की मेहनत और कृषि वैज्ञानिकों द्वारा विकसित उन्नत कृषि तकनीकों को जाता है।

यहां यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि बहुसंख्यक सीमांत कृषकों का हाल के वर्षों में सब्जियों की खेती करने के प्रति रुझान तेजी से बढ़ा है। अन्य मुख्य खाद्यान्न फसलों की अपेक्षा सब्जियों का अत्यंत कम समय में तैयार होना, इस बदलाव के पीछे के प्रमुख कारणों में से एक है। उदाहरण के लिए कुछ दलहनी फसलों को तैयार होने में छह माह से भी अधिक समय लग जाता है। दूसरी ओर अधिकांश सब्जियों का उत्पादन चंद सप्ताह में लिया जा सकता है। इतना ही नहीं नगदी फसल के तौर पर तुरंत आय अर्जन भी इस क्रम में एक महत्वपूर्ण आकर्षण है, जिसके कारण बड़ी संख्या में कृषक सब्जी उत्पादन में दिलचस्पी ले रहे हैं। यहां यह बताना भी आवश्यक है कि बागवानी फसलों की खेती करने वाले ऐसे किसानों में एक एकड़ से कम जोत वाले किसानों की संख्या अधिक है और इस संख्या में निरंतर वृद्धि का ट्रेण्ड भी देखने में आ रहा है।

यही नहीं संपूर्ण वर्ष में सब्जी उत्पादन कई फसल चक्र में करने का अतिरिक्त लाभ भी कृषकों को इस प्रकार की खेती करने में मिल जाता है, जिससे अत्यंत सीमित भूमि से पर्याप्त आय अर्जन करने में इन्हें सफलता मिल जाती है। हाल के वर्षों में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न अनुसंधान संस्थानों द्वारा सब्जियों की कम समय में अधिक पैदावार देने में सक्षम तमाम किस्मों को विकसित कर देश के कोने-कोने तक पहुंचाया गया है। भाकृअनुप के अधीन कार्यरत 700 से अधिक कृषि विज्ञान केंद्रों द्वारा कृषकों को इन जानकारियों के प्रति जागरूक बनाने के लिए बड़े पैमाने पर प्रयास किए जा रहे हैं।

परंपरागत खेती-बाड़ी की तुलना में बागवानी फसलों के मूल्यों में काफी उतार-चढाव की स्थिति बनी रहती है, लेकिन इसके बावजूद किसानों में इन फसलों के प्रति आकर्षण में बढ़ोतरी होती हुई देखी जा सकती है। इसके पीछे संभवतः सबसे बड़ा कारण है, खाद्यान्नों की तुलना में बागवानी फसलों से कहीं अधिक आमदनी का होना। हाल के वर्षों में बागवानी फसलों के साल दर साल बढ़ते रिकार्ड उत्पादन के पीछे यह तर्क भी दिया जा सकता है।

देश में बढ़ते शहरीकरण से आम लोगों की आहार आदतों में बदलाव आ रहा है। इस परिवर्तन का नतीजा है खाद्यान्नों के उपभोग में कमी तथा फल, सब्जी अथवा इनसे तैयार जूस आदि की खपत में वृद्धि। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि बागवानी उत्पादों की मांग में वृद्धि भी एक अन्य कारक है, जिसकी वजह से कृषक समुदाय का रुझान बागवानी फसलों की ओर बढ़ा है। प्राप्त आंकड़ों से पता चलता है कि बागवानी फसलों की खेती की प्रवृति देश के अधिकांश हिस्सों में बढ़ रही है, दूसरे शब्दों में यह चुनिंदा क्षेत्रों तक सीमित नहीं है।

अति शीघ्र खराब होने वाले बागवानी उत्पादों के लिए कोल्ड स्टोरेज और प्रसंस्करण सुविधाओं की कमी के कारण बड़े पैमाने पर इनकी बर्बादी हो जाती है। इस हानि को कम से कम करने हेतु सरकार और निजी क्षेत्र की ओर से इस क्षेत्र में निवेश किया जाना आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। इसका लाभ बागवानी आधारित कृषि उत्पादों के बढ़ते निर्यात और कृषकों की अतिरिक्त आमदनी के रूप में भविष्य में मिल सकता है। इस प्रकार अन्य सरकारी योजनाओं के साथ निजी क्षेत्र के समन्वित प्रयासों से कृषक आमदनी को दोगुना करने की संकल्पना को मूर्त रूप दिया जा सकता है।

(अशोक सिंह)

स्ट्रॉबेरी से पौष्टिकता के साथ लाभ

महेश चौधरी[1], **अनोप कुमारी**[2], **संतोष चौधरी**[2] और **रागिनी राणावत**[1]

स्ट्रॉबेरी के फल बड़े लुभावने, रसीले एवं पौष्टिक होते हैं। ये मध्यम आकार (10-15 ग्राम), चित्ताकर्षक, सुवासयुक्त और सिंदूरी रंग लिए हुए बहुत ही नरम होते हैं। इनका खाने योग्य भाग लगभग 98 प्रतिशत होता है। इन फलों में विटामिन-सी तथा लौह तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। यह अपने विशेष स्वाद एवं रंग के साथ-साथ औषधीय गुणों के कारण भी एक महत्वपूर्ण फल है। इसका उपयोग कई मूल्य संवर्धित उत्पादों जैसे आईसक्रीम, जैम, जैली, कैंडी, केक इत्यादि बनाने के लिए भी किया जाता है। इसकी खेती अन्य फल वाली फसलों की तुलना में कम समय में ज्यादा मुनाफा दिला सकती है। यह अल्प अवधि (4-5 महीने) में ही फलत देने वाली फसल है।

स्ट्रॉबेरी का वानस्पतिक नाम फ्रेगेरिया अननासा है। यह रोजेसी कुल का सदस्य है। इसका पौधा शाकीय, छोटा, कोमल तथा बहुवर्षीय होता है। इसका तना नाममात्र का तथा पूर्ण विकसित त्रिपत्री पत्तियां होती हैं। यह दो अन्य प्रजातियों (फ्रेगेरिया चिलयोनसिस एवं फ्रेगेरिया बरजीनियाना) के प्राकृतिक संकरण से विकसित किया गया है।

भारत में कुछ वर्षों पूर्व तक इसकी खेती केवल पहाड़ी क्षेत्रों जैसे उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, कश्मीर घाटी, महाराष्ट्र, कालिम्पोंग इत्यादि जगहों तक ही सीमित थी। वर्तमान में नई उन्नत प्रजातियों के विकास से इसको उष्णकटिबंधीय जलवायु में भी सफलतापूर्वक उगाया जा रहा है। इसके कारण यह मैदानी भागों जैसे उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, बिहार आदि राज्यों में अपनी अच्छी पहचान बना चुकी है। तकनीकी जानकारी के अभाव में किसान भाई इसकी खेती करने में अपने आपको असहज महसूस करते हैं। अत: प्रस्तुत लेख में इसकी वैज्ञानिक खेती के बारे में विस्तारपूर्वक समझाया गया है। इससे किसान भाई उच्च

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, बड़गांव, उदयपुर-313 011 (राजस्थान); [2]कृषि महाविद्यालय, मंडोर (कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर-342304 (राजस्थान)

लाल-लाल स्ट्रॉबेरी

उत्पादन व गुणवत्ता प्राप्त करके अधिकाधिक लाभ अर्जित कर सकते हैं।

जलवायु

स्ट्रॉबेरी शीतोष्ण जलवायु की फसल है, परंतु उन्नत किस्मों के विकास से इसको अब समशीतोष्ण एवं उष्णकटिबंधीय जलवायु में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। यह कम प्रकाश अवधि (शॉर्ट डे) वाला पौधा है। इसमें पुष्पन प्रारंभ होने के लिए लगभग 10 दिनों तक 8 घंटे से कम प्रकाश अवधि की जरूरत होती है। पौधों की अच्छी बढ़वार के लिए दिन का अधिकतम तापमान 22^0 सेल्सियस एवं रात का तापमान 7^0-13^0 सेल्सियस उपयुक्त माना गया है। इसके फूलों व नाजुक फलों को पाले से बचाने के लिए निम्न सुरंग तकनीक (लो टनल टैक्नीक) का प्रयोग किया जा सकता है।

भूमि

स्ट्रॉबेरी की खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। अधिक एवं गुणवत्तायुक्त उत्पादन के लिए अच्छे जल निकास वाली, जीवांशयुक्त, हल्की बलुई दोमट मृदा, जिसका पी-एच मान 5.5 से 6.5 के मध्य हो, उपयुक्त रहती है। मृदा में कैल्शियम की अधिक मात्रा से पौधे की पत्तियां पीली पड़ जाती हैं। क्षारीय एवं सूत्रकृमि ग्रसित भूमि भी स्ट्रॉबेरी की खेती के लिए उपयुक्त नहीं रहती है।

स्ट्रॉबेरी की किस्में

भारत में स्ट्रॉबेरी की बहुत सी किस्में उगाई जाती हैं। व्यावसायिक फल उत्पादन के लिए सही किस्मों का चुनाव बहुत जरूरी है। किस्मों का चयन क्षेत्र की जलवायु एवं मृदा की विशेषताओं को ध्यान में रखकर ही करना चाहिए। देश में उगाई जाने वाली कुछ प्रमुख किस्में इस प्रकार हैं:- चान्डलर, फेस्टिवल, विन्टर डॉन, फ्लोरिना, कैमा रोजा, ओसो ग्रैन्ड, ओफरा, स्वीट चार्ली, गुरिल्ला, टियोगा, सीस्कैप, डाना, टोरे, सेल्वा, बेलरूवी, फर्न, पजारो इत्यादि।

ग्रे मोल्ड

यह कवक सम्पूर्ण पौधे (तना, पत्तियां, फल, फूल, पेटीओल) को नुकसान पहुंचाता है। परंतु पुष्पन एवं फल लगते समय यह ज्यादा नुकसान पहुंचाता है। इसके कारण कच्चे एवं पके फल खराब हो जाते हैं। प्रभावित भागों पर ग्रे रंग के धब्बे बन जाते हैं। यह हवा एवं पानी द्वारा रोगग्रसित भाग से स्वस्थ पौधों में फैल जाता है। बारिश के दिनों में जब तापमान कम एवं आर्द्रता ज्यादा होती है, तो इसके फैलने के लिए यह बहुत अनुकूल समय होता है। अतः इसका सही समय पर बचाव जरूरी है। इससे बचाव के लिए डाइथेन एम-45 नामक फफूंदनाशी की 1.5 ग्राम मात्रा का प्रति लीटर पानी में डालकर छिड़काव करना चाहिए।

सारणी 1. स्ट्रॉबेरी में पाए जाने वाले पोषक तत्व (प्रति 100 ग्राम में)

तत्व	मात्रा	तत्व	मात्रा
पानी (ग्राम)	92	वसा (ग्राम)	0.5
प्रोटीन (ग्राम)	0.7	पोटेशियम (मि.ग्रा.)	164
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	7.0	विटामिन ए (आई.यू.)	60
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	21.0	थायमिन (मि.ग्रा.)	0.03
रेशा (ग्राम)	0.5	राइबोफ्लेविन (मि.ग्रा.)	0.07
फॉस्फोरस (मि.ग्रा.)	21.0	अम्लता (प्रतिशत)	0.9-1.8
लौह तत्व (मि.ग्रा.)	0.4	विटामिन सी (मि.ग्रा.)	60.0
शुगर (प्रतिशत)	5.0	सोडियम (मि.ग्रा.)	1.0
मैग्नीशियम (मि.ग्रा.)	10	नियासिन (मि.ग्रा.)	0.60

क्यारियां तैयार करना

स्ट्रॉबेरी के व्यावसायिक उत्पादन के लिए जमीन की सतह से लगभग 25-30 सें.मी. ऊंची उठी हुई क्यारियां (रेज्ड बैड) बनाएं। क्यारियों की चौड़ाई 100-120 सें.मी. तथा लंबाई खेत की स्थिति के अनुसार रखी जा सकती है। क्यारियों की देखभाल तथा विभिन्न कार्य करने के लिए दो क्यारियों के बीच में 40-50 सें.मी. चौड़ा खाली स्थान (रास्ता) रखा जाता है। उठी हुई क्यारियां बनाने

मृदा सौरीकरण

स्ट्रॉबेरी उथली जड़ वाला पौधा है। अतः रोपाई के पूर्व खेत को भलीभांति तैयार कर लेना चाहिए। इसके लिए एक जुताई मृदा पलटने वाले हल से तथा 2-3 जुताई देसी हल से करके पाटा चलाकर मृदा को अच्छी तरह भुरभुरा बना लेना चाहिए। यदि मृदा में किसी कवक या बीमारी का प्रकोप हो तो उसे उपचारित कर लें। इसके लिए गर्मियों में जब तापमान 40^0 से 45^0 सेल्सियस के मध्य हो, मृदा सौरीकरण कर लेना चाहिए। सौरीकरण करने के लिए क्यारियों को हल्का नम कर या हल्की सिंचाई कर, 200 गेज की प्लास्टिक की पारदर्शी फिल्म से 6-8 सप्ताह तक ढककर रखें। प्लास्टिक फिल्म के किनारों को मृदा से ढक देना चाहिए, ताकि हवा अंदर प्रवेश नहीं कर पाए। इस प्रक्रिया से प्लास्टिक फिल्म के अंदर का तापमान 48^0-56^0 सेल्सियस तक पहुंच जाता है। इससे मृदा में मौजूद हानिकारक कीट, रोगों के बीजाणु तथा कुछ खरपतवारों के बीज भी नष्ट हो जाते हैं। आजकल इसके लिए कई तरह के रसायनों का भी प्रयोग किया जाता है।

तुड़ाई के लिए तैयार फल

छोटे डिब्बों में फलों की पैकिंग

से अधिक जल आसानी से बाहर निकल जाता है। इससे रोगों का प्रकोप कम होता है। साथ ही टपक सिंचाई यंत्र स्थापित करने में भी आसानी रहती है।

प्रवर्धन

स्ट्रॉबेरी का प्रवर्धन मुख्यत: रनर्स (लता को पकड़ने वाली नोक) द्वारा किया जाता है। यह वानस्पतिक प्रवर्धन का एक भाग है। एक पौधे से लगभग 7-15 रनर्स प्राप्त हो जाते हैं। बड़े स्तर पर प्रवर्धन के लिए सूक्ष्म प्रवर्धन (ऊतक प्रवर्धन) का प्रयोग करते हैं। इस विधि से विषाणुमुक्त पौधों का प्रवर्धन संभव है। साथ ही इससे वर्षभर पौधे भी प्राप्त किए जा सकते हैं। खेत में लगाने के लिए 4-6 पत्तियों वाले पौधे उपयुक्त होते हैं।

रोपाई का समय एवं विधि

स्ट्रॉबेरी के पौधों को रोपने का सही समय जलवायु पर निर्भर करता है। उत्तरी भारत में इसकी रोपाई सितंबर से नवंबर के मध्य की जा सकती है। रोपण करते समय यह ध्यान रहे कि रनर्स स्वस्थ और कीट एवं रोगरहित होने चाहिए। यह पौधों के रोपण की दूरी, उगाई जाने वाली किस्म, मृदा की भौतिक दशा, रोपण विधि और उगाने की दशा इत्यादि पर निर्भर करता है। कुछ स्थानों पर इसके रोपण की दूरी 30 × 60 सें.मी. रखते हैं। इससे प्रति हैक्टर लगभग 55 हजार से 60 हजार पौधों की जरूरत होती है। अधिक उपज लेने के लिए पौधे से पौधे एवं कतार से कतार की दूरी

उठी हुई क्यारियों पर टपक सिंचाई प्रणाली

ग्रे मोल्ड से ग्रसित फल

30 सें.मी. रखी जाती है। यदि इस दूरी पर पौधों का रोपण करते हैं तो एक हैक्टर के लिए लगभग 1 लाख 11 हजार पौधों की जरूरत होती है।

खाद एवं उर्वरक

खाद एवं उर्वरकों के उपयोग का मुख्य उद्देश्य पौधों के समुचित विकास एवं बढ़वार के साथ ही मृदा में अनुकूल पोषण दशाएं बनाए रखना होता है। उर्वरकों को काम में लेने का उचित समय सामान्य तौर पर मृदा प्रकार, पोषक तत्व, जलवायु और फसल के स्वभाव पर निर्भर करता है। इनकी मात्रा, मृदा की उर्वरता तथा फसल को दी गई कार्बनिक खादों की मात्रा पर निर्भर करती है। यदि संतुलित मात्रा में खाद एवं उर्वरक दिए जाएं तो निश्चित रूप से पौधों की अच्छी बढ़वार

पलवार बिछाना

स्ट्रॉबेरी उत्पादन में यह एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। यह कार्य जमीन की ऊपरी सतह पर सूखे पत्तों, टहनियों या घासफूस से ढककर किया जाता है। परंतु आजकल पलवार बिछाने के लिए अधिकतर प्लास्टिक मल्च का प्रयोग किया जाता है। स्ट्रॉबेरी में इसका प्रयोग करने से फल सीधे मिट्टी के संपर्क में नहीं आते हैं। इससे फलों को सड़ने से बचाया जा सकता है। साथ ही यह खरपतवारों का नियंत्रण करने एवं सिंचाई की आवश्यकता को कम करने का कार्य करती है। पलवार के लिए सामान्यतया काले रंग की लगभग 50 माइक्रॉन मोटाई वाली प्लास्टिक की फिल्म का उपयोग किया जाता है। प्लास्टिक फिल्म बिछाने का कार्य पौध रोपण के लगभग एक महीने बाद, जब पौधे अच्छी तरह स्थापित हो जाएं, तब करते हैं। क्यारियों में प्लास्टिक पलवार बिछाते समय पौधे से पौधे व कतार से कतार की दूरी को ध्यान में रखते हुए छेद करते हैं, जिससे पौधे आसानी से ऊपर आ जाएं। पलवार बिछाने से पूर्व ड्रिप (टपक) सिंचाई प्रणाली क्यारियों में व्यवस्थित कर दी जाती है।

स्ट्रॉबेरी की फसल में काले रंग की प्लास्टिक पलवार का उपयोग

और अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। अतः हमेशा मृदा जांच के उपरांत ही खाद एवं उर्वरकों का उपयोग करना चाहिए। सामान्यतः खेत तैयार करते समय 10 से 12 टन कम्पोस्ट खाद, 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 15 कि.ग्रा. पोटाश प्रति एकड़ की दर से डालनी चाहिए। इसमें फर्टिगेशन के रूप में एन.पी.के. 19:19:19 की 25 ग्राम मात्रा प्रति वर्गमीटर की दर से सम्पूर्ण फसल चक्र में देनी चाहिए। यह मात्रा 15 दिनों के अंतराल पर 4-5 भागों में बांटकर देनी चाहिए। सूक्ष्म पोषक तत्वों का छिड़काव भी उत्पादन बढ़ाने में सहायक होता है।

निराई-गुड़ाई

पौधे लगाने के कुछ समय पश्चात उनके आसपास विभिन्न प्रकार के खरपतवार उग आते हैं। ये पौधों के साथ पोषक तत्वों, स्थान, नमी, वायु आदि के लिए स्पर्धा करते रहते हैं। इसके साथ ही ये विभिन्न प्रकार के कीट एवं रोगों को आश्रय प्रदान करते हैं। अक्टूबर में रोपित पौधों से नवंबर में फुटाव शुरू हो जाता है। फुटाव शुरू होने पर खेत की निराई-गुड़ाई करके खरपतवार निकाल देने चाहिए।

सिंचाई

पानी लगाने का सही समय कई कारकों जैसे मृदा प्रकार, मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा मौसम इत्यादि पर निर्भर करता है। स्ट्रॉबेरी के पौधे की जड़ें जमीन में ज्यादा गहराई तक नहीं जातीं। यह सतह पर ही फैलने वाला पौधा होता है। अतः इसमें कम समय के अंतराल पर नियमित सिंचाई की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई पौध रोपण के तुरंत पश्चात कर देनी चाहिए। उसके बाद 2-3 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहें। सिंचाई के लिए ड्रिप सिंचाई प्रणाली उत्तम रहती है। इस पद्धति द्वारा पौधों को उनकी आवश्यकता अनुसार पानी को बूंद-बूंद के रूप में जड़ क्षेत्र में उपलब्ध कराया जाता है। इस प्रणाली में प्लास्टिक लाइनों द्वारा पानी पौधों की जड़ों में सीधा तथा समान रूप से पहुंचाया जा सकता है। इसके साथ ही कम पानी का प्रयोग करके अधिकतम पैदावार ली जा सकती है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली में जल के साथ-साथ उर्वरक, कीटनाशक व अन्य घुलनशील रासायनिक तत्वों को भी सीधे पौधों तक पहुंचाया जा सकता है। जब पानी के साथ-साथ पोषक तत्व भी पौधों को उपलब्ध कराए जाते हैं तो उसे फर्टिगेशन (फर्टिलाइजर+इरीगेशन) के नाम से जाना जाता है। फर्टिगेशन में पूर्णतः घुलनशील या तरल उर्वरक का ही प्रयोग किया जा सकता है।

निम्न सुरंग (लो-टनल) तकनीक का प्रयोग

शरद ऋतु (दिसंबर-जनवरी) में तापमान में काफी गिरावट आ जाती है। इस समय खेत में स्ट्रॉबेरी के पौधों को पाले से बचाने के लिए निम्न सुरंग तकनीक का उपयोग काफी फायदेमंद हो सकता है। इससे विपरीत ठंडे मौसम में भी अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है। लो-टनल एक कम ऊंचाई वाली संरचना होती है। इसका निर्माण खुले खेत में उगाई जाने वाली फसल को कम तापमान/पाले से होने वाले नुकसान से बचाने के लिए किया जाता है। यह दूसरी संरचनाओं की अपेक्षा काफी कारगर एवं सस्ती तकनीक है। इसे तैयार करना काफी आसान होता है। लो-टनल संरचना में हरितगृह जैसा ही वातावरण उत्पन्न हो जाता है। निम्न सुरंग (लो-टनल) स्थापित करने के लिए अर्धचन्द्राकार लोहे के तारों को 2-3 मीटर की दूरी पर स्थापित करते हैं। उसके बाद अर्धचन्द्राकार लोहे के तारों के ऊपर मध्य में रस्सी बांध देते हैं। इन तारों पर 50 माइक्रॉन मोटाई तथा 2 मीटर चौड़ी पारदर्शी प्लास्टिक की चादर बिछाकर इसकी लंबाई वाले दोनों सिरों को मिट्टी से दबा देते हैं। इससे तेज हवा चलने पर भी प्लास्टिक नहीं उड़ती। निम्न सुरंग/पॉलीथीन की ऊंचाई लगभग 60-70 सें.मी. रखते हैं। प्लास्टिक की फिल्म को दिन के समय हटा देते हैं तथा रात के समय पुनः ढक देते हैं। ऐसा करने से सुरंग के अंदर मिट्टी के तापमान में वृद्धि हो जाती है। इससे पुष्पन जल्दी होता है और अच्छी फलत प्राप्त होती है। फरवरी के दूसरे या तीसरे सप्ताह में जब तापमान बढ़ जाता है तो प्लास्टिक फिल्म को पूर्णतः हटा देते हैं।

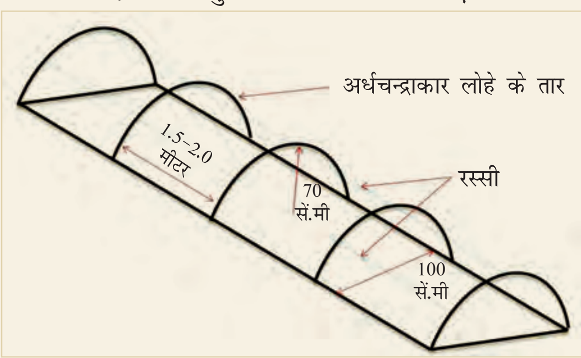

लो-टनल स्थापित करने का ढंग

फलों की तुड़ाई

स्ट्रॉबेरी के फलों की तुड़ाई का समय बाजार की दूरी के अनुसार तय करते हैं। सामान्यतः फलों की तुड़ाई आधे से तीन चौथाई भाग (2/3) के रंग बदलने के पश्चात करते हैं। फलों की तुड़ाई डंठल सहित प्रातःकाल सूरज निकलने से पूर्व ही पूर्ण कर लेनी चाहिए। तोड़े हुए फलों को रखने के लिए ट्रे का प्रयोग करना चाहिए, क्योंकि इसके फल बड़े नाजुक होते हैं। इन्हें गहरे बर्तन में रखने से फलों की ऊंची परत के दबाव के कारण नीचे भरे फलों को नुकसान पहुंच सकता है। इसके फलों को 2-3 दिनों तक ही सुरक्षित रखा जा सकता है। अतः तोड़ने के बाद फलों को ज्यादा समय तक नहीं रखना चाहिए। बिक्री के लिए बाजार में भेजने के लिए फलों को प्लास्टिक के छोटे डिब्बों में पैक करना चाहिए तथा बाद में इन डिब्बों को कोरूगेटिड फाइबर बोर्ड (सीएफबी) से बने बड़े डिब्बों में पैक करके भेजना चाहिए।

उपज

स्ट्रॉबेरी के फलों की उपज कई बातों पर निर्भर करती है। इनमें उगाई जाने वाली किस्म, जलवायु, मृदा, पौधों की संख्या, फसल प्रबंधन इत्यादि प्रमुख हैं। इसके प्रति

सीएफबी डिब्बों में पैकिंग

पौधे से एक मौसम में 500-600 ग्राम फल प्राप्त किए जा सकते हैं। एक एकड़ क्षेत्रफल में 80 से 100 क्विंटल फलों का उत्पादन हो जाता है। यह उत्पादन अच्छे फसल प्रबंधन से बढ़ाया भी जा सकता है।

भूस्तारी (रनर्स) उत्पादन

स्ट्रॉबेरी का प्रवर्धन भूस्तारी द्वारा होता है। अत: जैसे ही फूल व फल बनने बंद हो जाएं, क्यारियों से पलवार शीट हटा देनी चाहिए। पौधों को भूस्तारी बनाने के लिए छोड़ देना चाहिए। पहाड़ी क्षेत्रों में तो तापमान कम होने के कारण ये आसानी से बढ़ जाते हैं, परंतु मैदानी क्षेत्रों में अधिक गर्मी एवं बरसात के कारण पौधे मर जाते हैं। इन्हें बचाने के लिए हरितगृह या किसी अनुकूल संरचना का प्रयोग करना चाहिए।

कीट एवं रोग

स्ट्रॉबेरी से अच्छा उत्पादन लेने के लिए इनका कीट एवं रोगों से मुक्त होना अति आवश्यक है। इसमें कई तरह के कीट एवं रोग नुकसान पहुंचाते हैं। इससे उपज में काफी कमी आ जाती है। अत: सही समय पर इनकी पहचान करके इन्हें दूर ही रखा जाए तो अच्छा है। कुछ प्रमुख कीट एवं रोगों की पहचान एवं उनका निदान इस प्रकार है :

पर्णजीवी (थ्रिप्स)

यह सूक्ष्म आकार का (एक मि.मी. से छोटा) हल्के पीले और भूरे रंग का कीट होता है। इस कीट के वयस्क और शिशु दोनों ही पत्तियों एवं पुष्पन से रस चूसकर क्षति पहुंचाते हैं। परंतु पुष्पन के समय यह ज्यादा नुकसान पहुंचाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 2 मि.ली. या डाइमेथोएट 30 ई.सी. एक मि.ली. या कोनफीडोर 1.5 मि.ली. दवा का प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

लाल मकड़ी

यह आठ पैरों वाला लाल रंग का कीट होता है। इसके शिशु और वयस्क दोनों ही पौधों को नुकसान पहुंचाते हैं। ये कीट पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते हैं। इससे पत्तों पर धब्बे बन जाते हैं। इनकी वृद्धि रुक जाने से उपज कम हो जाती है। इसका प्रकोप गर्म और शुष्क मौसम में ज्यादा होता है। इस कीट के नियंत्रण के लिए पौधों पर सल्फर 1.5-2 ग्राम या ओमाइट एक मि.ली. या कैल्थेन 18.5 ई.सी. 1-2 मि.ली या आबामेक्टिन 1.9 ई.सी. एक मि.ली. दवा का प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

काला धब्बा

यह एक फफूंदीजनित रोग है। इससे प्रभावित पत्तियों पर काले रंग के धब्बे बनने प्रारंभ हो जाते हैं। यह रोग जलवायु में आर्द्रता होने पर अधिक फैलता है। इस रोग की रोकथाम के लिए कैप्टॉन नामक दवा का 0.2 प्रतिशत या बैनलेट 0.1 प्रतिशत प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

चूर्णी फफूंद या छाछ्या

इस रोग के लक्षण पहले पत्तियों की ऊपरी सतह पर एवं तनों के ऊपर छोटे-छोटे बैंगनी रंग के धब्बों के रूप में दिखते हैं। इसकी रोकथाम के लिए केराथेन 0.1 प्रतिशत या केलिक्सिन 0.1 प्रतिशत या घुलनशील गंधक 0.2 प्रतिशत घोल का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

एंथ्रेक्नोज (श्यामव्रण) एवं फल सड़न

यह रोग भी गर्म एवं आर्द्र मौसम में ज्यादा फैलता है। इसके कारण पत्तियों पर हल्के, गहरे काले रंग के धब्बे दिखाई देने लगते हैं। यह फलों को भी प्रभावित करता है। इससे गोल हल्के जलीयनुमा धब्बे फलों पर दिखाई देने लगते हैं। इससे बचाव के लिए हमेशा अच्छे जल निकास एवं खरपतवारमुक्त खेत में ही स्ट्रॉबेरी उगाएं। साथ ही स्वस्थ एवं रोगमुक्त रोपण सामग्री के साथ-साथ फसलचक्र अपनाएं। कार्बेन्डाजिम दवा 200 ग्राम को 100 लीटर पानी में मिलाकर 10-15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

खरपतवारों से अरबों की फसल का नुकसान

भारत में लगभग 11 बिलियन डॉलर मूल्य की फसलों का सालाना नुकसान सिर्फ 10 मुख्य फसलों में लगने वाले खरपतवारों के कारण होता है। यह तथ्य 18 राज्यों के लगभग 1,581 परीक्षणों के बाद ज्ञात हुआ। 'क्रॉप प्रोडक्शन' नामक शोध पत्रिका में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार खरपतवारों से कीटों, फफूंद और अन्य फसल कीटों की तुलना में कहीं अधिक नुकसान होता है।

किसानों को आर्थिक रूप से नुकसान पहुंचाने वाले मुख्य तौर पर तीन प्रमुख कारक हैं : कीट, रोग और खरपतवार। भाकृअनुप के खरपतवार अनुसंधान निदेशालय में कार्यरत कृषि वैज्ञानिक डा. योगिता घरडे द्वारा किए गए शोध अध्ययनों के आधार पर पत्रिका में प्रकाशित लेख के अनुसार 'कीटों और रोगों' के फसल पर प्रभाव के विपरीत खरपतवार पर किसी का ध्यान नहीं जाता है। डा. योगिता के अनुसार अगर खरपतवार वृद्धि को समय से पहले नहीं रोका जाए तो 70 प्रतिशत तक फसलों की हानि हो सकती है।

इस अध्ययन को तीन हिस्सों में बांटा गया था, जिनमें से एक में खरपतवारों को अनियंत्रित रूप से बढ़ने दिया गया, दूसरे में स्थानीय तरीकों से इनका नियंत्रण करने का प्रयास किया गया और तीसरे हिस्से में खरपतवारों की पूरी तरह से रोकथाम की गई।

इनके अनुसार फसल के कुल नुकसान की गणना सरकार द्वारा दिए जाने वाले न्यूनतम समर्थन मूल्य के आधार पर करने पर प्रतिवर्ष किसानों को होने वाले आर्थिक नुकसान का आंकलन संभव हो सका।

गृहवाटिका है स्वास्थ्य एवं पोषण का आधार

दुर्गा प्रसाद महाराणा*, डी.आर. भारद्वाज, आनंद कुमार सिंह*, रमेश कुमार सिंह, के.के. गौतम और **बिजेन्द्र सिंह**
भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

पोषक एवं औषधीय गुणों के कारण हमारे दैनिक जीवन में ताजी व हरी सब्जियों का अत्यधिक महत्व है। इनके नियमित सेवन से शरीर के लिए प्रचुर मात्रा में आवश्यक खनिज तत्व एवं विटामिन्स के साथ अन्य जरूरी पौष्टिक तत्व भी सुगमता से प्राप्त होते हैं। पोषण जरूरतों को पूरा करने के लिए प्रति व्यक्ति प्रति दिन 300 ग्राम सब्जियों की आवश्यकता है। इसमें 125 ग्राम पत्तेदार सब्जियां, 100 ग्राम कंदमूल वाली एवं 75 ग्राम अन्य सब्जियां सम्मिलित हैं। मकान के रिक्त हिस्से या अहाते में उपलब्ध जमीन में भी कम परिश्रम करके ताजी, हरी एवं गुणवत्तायुक्त सब्जियां उगा सकते हैं। गृहवाटिका से प्राप्त सब्जियां रसोई का खर्च तो कम करती ही हैं, साथ ही समय का उपयोग भी हो जाता है। सामान्यत: पांच सदस्यों वाले एक परिवार की दैनिक जरुरतों को पूरा करने के लिए लगभग 100-125 वर्ग मीटर स्थान पर्याप्त होता है। गृहवाटिका में काम करने एवं पानी देने में सुविधा के अनुसार 2-3 मीटर के आकार की क्यारियां बनाना उपयुक्त रहता है। क्यारियों को एक-दूसरे से अलग करने के लिए बीच में मेड़ बनानी चाहिए एवं उस पर भी जड़ वाली (मूली, चुकंदर, गाजर, शलजम आदि) या अन्य बहुवर्षीय सब्जियां (सहजन, करी पत्ता आदि) उगानी चाहिए।

गृहवाटिका में मौसमी सब्जियां उगाने के लिए उनका चयन, स्थान की उपलब्धता, बुआई एवं पौधे लगाने का समय, बुआई के तरीके, बीज की मात्रा एवं खाद तथा उर्वरकों के उपयोग की मात्रा को ध्यान में रखकर करना चाहिए। प्रमुख सब्जियों के अलावा पुदीना, धनिया, हल्दी, अदरक, सौंफ आदि भी गृहवाटिका में आवश्यकता अनुसार लगाए जा सकते हैं। गृहवाटिका में बहुवर्षीय सब्जियों जैसे कि परवल, कुंदरू आदि को मचान बनाकर चढ़ा देना चाहिए। किनारे की तरफ फलदार वृक्ष जैसे कि केला, पपीता, करोंदा, अनार आदि लगाकर फल भी प्राप्त कर सकते हैं। सामान्यत: सब्जियों को बीज, तना, जड़ आदि से उगाया जाता है। कुछ सब्जी फसलों की उन्नत किस्मों एवं वांछित क्षेत्रफल का उल्लेख सारणी-2 में किया गया है।

क्यारी की तैयारी

बीज बुआई/पौध रोपाई से 2-3 सप्ताह

*उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

कुम्हड़ा

पहले क्यारियों की मृदा की अच्छी प्रकार से खुदाई कर घास-फूस को निकाल कर बाहर कर लेना चाहिए। मिट्टी के ढेलों को तोड़कर भुरभुरा कर लेना चाहिए। इससे बीज डालने/

पाईसाग

फसल चक्र

गृहवाटिका में निम्नलिखित फसल चक्र सुगमता से अपनाए जा सकते हैं:

- टमाटर-करेला-फूल गोभी
- बैंगन-सब्जी मटर-पालक
- बैंगन-सब्जी मटर-मेथी
- भिंडी-लहसुन
- हरी मिर्च-मूली-पत्ती वाली सब्जियां
- लोबिया-आलू
- शलजम-प्याज-करेला
- चिकनी तोरई-भिंडी-मूली
- लौकी-खीरा-मूली
- करेला-चिकनी तोरई-मूली
- खीरा-लौकी-शलजम
- फराश बीन-भिंडी-गाजर
- प्याज-भिंडी-शलजम

पौध रोपण से पहले बढ़िया क्यारी तैयार हो सकेगी। बुआई योग्य क्यारियों को तैयार करने के बाद इनमें सड़ी गोबर की खाद मृदा में अच्छी तरह से मिला दें।

परवल

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

बुआई से पहले क्यारियों में खादों एवं संस्तुत उर्वरकों को एक समान छिड़ककर मृदा में अच्छी तरह से मिला दें। गृहवाटिका

चिकनी तोरई

सारणी 1. सब्जियों का पोषण एवं विटामिन संघटन (प्रति 100 ग्राम)

सब्जियां	प्रोटीन (ग्राम)	वसा (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	रेशा (ग्राम)	विटामिन ए(आई.यू.)	विटामिन सी (मि.ग्रा.)	थाईमिन (मि.ग्रा.)	राईबोफ्लाविन (मि.ग्रा.)
चौलाई	4.0	0.5	6.1	1.0	9,180	99.9	0.03	0.30
भिंडी	1.9	0.2	6.4	1.2	172	13	0.07	0.10
टमाटर	1.1	0.2	4.7	0.7	900	23	0.06	0.04
बैंगन	1.4	0.3	4.0	-	122	12.0	0.04	0.11
हरी मिर्च	2.9	0.6	6.1	6.7	454	111	0.06	0.03
पत्तागोभी	1.3	0.2	5.4	1.5	130	47	0.05	0.05
फूलगोभी	2.7	0.2	5.2	0.9	60	78	0.11	0.10
गांठ गोभी	2.0	0.1	6.6	1.1	20	66	0.06	0.04
गाजर	1.1	0.2	9.1	1.0	11,000	8	0.06	0.05
धनिया पत्ती	3.3	0.6	6.3	-	11,168	135	0.50	0.06
मेथी	4.4	0.9	6.0	1.1	3,861	52	0.04	0.31
पालक	3.2	0.3	4.3	-	8,100	51	0.10	0.20
सब्जी मटर	6.3	0.4	14.4	4.0	640	27	0.35	0.14
प्याज	1.2	0.1	11.1	0.5	35	11	0.08	0.01
लहसुन	1.9	0.1	11.1	0.5	600	19	0.08	0.11
चिकनी तोरई	1.2	0.2	2.9	0.5	369	-	0.02	0.06
खरबूजा	0.3	0.2	3.5	0.6	279	26	0.11	0.08
करेला	1.6	0.2	4.2	1.7	208	88	0.07	0.09
लौकी	0.2	0.1	2.5	1.5	-	6	0.03	0.01
परवल	2.0	0.3	2.2	3.0	252	29	0.05	0.5
खीरा	0.4	0.1	2.5	0.6	-	7	0.03	-
शकरकंद	1.8	0.7	20	1.0	8,800	21	0.10	0.06
चुकंदर	3.4	0.8	6.5	0.7	5,862	70	0.26	0.56

सारणी 2. गृहवाटिका में लगने वाली सब्जियां, उन्नत किस्में तथा वांछित क्षेत्रफल

सब्जियां	उन्नत किस्में	क्षेत्रफल (वर्ग मीटर)
गर्मियों में लगनी वाली सब्जियां		
टमाटर	काशी अमन, काशी अमृत, काशी अभिमान, पंजाब छुहारा, हिसार अरुण, पूसा रूबी, अर्का विकास	25
हरी मिर्च	काशी अनमोल, काशी तेज, पूसा ज्वाला, पूसा सदाबहार, आंध्र ज्योति, भाग्य लक्ष्मी, भास्कर, पंत सी-1	5
बैंगन	काशी संदेश, काशी उत्तम, काशी तरू, पूसा पर्पल लांग, पंजाब बहार, पूसा पर्पल क्लस्टर, पूसा क्रांति, पंत ऋतुराज, पंत सम्राट	10
भिंडी	काशी प्रगति, काशी क्रांति, अर्का अनामिका, वर्षा उपहार, हिसार उन्नत, परभनी क्रांति, पंजाब पद्मिनी, पंजाब-7	25
लौकी	काशी गंगा, काशी बहार,पूसा नवीन, पूसा समर प्रोलिफिक लांग, अर्का बहार, पंजाब लांग, पंजाब राउंड, पंजाब कोमल	25
खीरा	पूसा उदय, जैपेनीज लांग ग्रीन, स्ट्रैट-8, पोएनसेट, शीतल, पूसा संयोग	25
करेला	कोयंबटूर लांग, पूसा दो मौसमी, अर्का हरित, प्रिया, पूसा विशेष	25
तरबूज	शुगर बेबी, अर्का माणिक, अर्का ज्योति, दुर्गापुरा लाल, दुर्गापुरा मीठा	25
खरबूजा	काशी मधु, पूसा रसराज, हरा मधु, अर्का जीत, दुर्गापुरा मधु, अर्का राजहंस, पूसा शरबती, पंजाब हाइब्रिड	25
चिकनी तोरई	काशी दिव्या, पूसा चिकनी, पूसा सुप्रिया, पूसा स्नेहा, कल्याणपुर चिकनी	25
नसदार तोरई	काशी शिवानी, पूसा नसदार, अर्का विक्रम, पंजाब सदाबहार, कोंकण हरिता	25
सत्पुतिया	काशी शुभांगी	25
टिंडा	अर्का टिंडा, एस.-4, पूसा रौनक	25
कुम्हड़ा	काशी हरित, पूसा विश्वास, नरेंद्र अमृत, पूसा हाइब्रिड	25
लोबिया	काशी कंचन, काशी निधि, पूसा ऋतुराज, पूसा फाल्गुनी	10
चौलाई	पूसा कीर्ति, पूसा किरन, पूसा लाल चौलाई, अर्का अरुणिमा	10
ग्वार	पूसा नवबहार, पूसा सदाबहार	10
सर्दियों में लगने वाली सब्जियां		
फूलगोभी	**अगेती:** काशी अगेती, अर्ली कुंवारी, पूसा कार्तिकी, पूसा दीपाली **मध्य:** पूसा सिंथेटिक, पूसा शुभ्रा, पूसा हिमज्योति **पछेती:** पूसा स्नोबॉल-1, पूसा स्नोबॉल-2, पूसा स्नोबॉल-16	20
पत्ता गोभी	गोल्डन एंकर, प्राइड ऑफ इंडिया, ड्रम हेड, पूसा मुद्रा, के.जी.एम.आर.-1	20
ब्रोकली	पूसा ब्रोकली, पालम समृद्धि, पालम कंचन, पालम विचित्र	–
शलजम	गोल्डन बॉल, पूसा स्वर्णिमा, पूसा चंद्रिमा, पूसा कंचन, पंजाब सफेद	5
गांठगोभी	पर्पल वियना, व्हाईट वियना, ग्रीन वियना	5
गाजर	पूसा केसर, पूसा मेघाली, अर्ली नान्टेस, पूसा यमदग्नी, पूसा वसुधा	10
प्याज	एग्री फाउंड लाईट रेड, भीमा सुपर, पंजाब-48, पंजाब सलेक्शन, पूसा रेड, एन-53, एन-2-4-1, एग्री फाउंड डार्क रेड	15
लहसुन	यमुना सफेद-1, यमुना सफेद-2, यमुना सफेद-3, यमुना सफेद-4, जी-41, एग्री फाउंड व्हाईट, पंत लोहित, भीमा ओमकार	5
पालक	ऑल ग्रीन, पूसा पालक, पूसा हरित, पूसा ज्योति	5
धनिया पत्ती	पंत धनिया-1, पंत धनिया-2	5
मेथी	पूसा अर्ली बंचिंग, प्रभा,कसूरी मेथी	5
मूली	काशी हंस, काशी श्वेता, पंजाब सफेद, जापानी व्हाईट लाँग, पूसा हिमानी, पूसा चेतकी, पूसा गुलाबी, पूसा जामुनी, पूसा श्वेता	5
सब्जी मटर	काशी नन्दिनी, काशी उदय, अर्केल, बोनविल, आजाद पी-1, रचना, मटर अगेती-6, जवाहर मटर-4	10
बांकला	पूसा सुमित	10
आलू	कुफरी अलंकार, कुफरी लालिमा, कुफरी चिपसोना-1, कुफरी चिपसोना-2, कुफरी ज्योति, कुफरी चंद्रमुखी	20
बथुआ	पूसा बथुआ	5

गृहवाटिका में पौध संरक्षण

खरपतवार प्रबंधन

खरपतवार नियंत्रण पर विशेष ध्यान देना चाहिए, क्योंकि ये सब्जियों की उपज एवं गुणवत्ता को कम कर देते हैं। बुआई के 20-30 दिनों बाद खुरपी की सहायता से हल्की निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। इससे खरपतवार निकल जाते हैं। साथ ही साथ मृदा की निचली सतह को भी हवा मिल जाती है।

रोगों एवं कीटों का प्रबंधन

हानिकारक कीटों एवं रोगों के आक्रमण को रोकने के लिए उचित नियंत्रण विधि अपनानी चाहिए तथा सफाई का विशेष ध्यान रखना चाहिए। बहुत से रोगों एवं कीटों की उत्पत्ति को उचित फसलचक्र अपनाकर, क्यारी की साफ-सफाई रखकर एवं ठीक प्रकार से जमीन तैयार करके कम किया जा सकता है। ओजपूर्ण बीजों का प्रयोग करें तथा फफूंदनाशी से उपचारित बीज ही बोएं। रोपाई में प्रयुक्त पौधे स्वस्थ होने चाहिए। बाजार में उपलब्ध रोगनाशकों (ट्राइकोडर्मा) एवं वानस्पतिक कीटनाशकों (निम्बीसीडीन, नीम का तेल) का प्रयोग करना चाहिए। सूत्रकृमि से बचाव के लिए क्यारियों में बदल-बदल कर गेंदे के फूल लगाने चाहिए। दीमक के नियंत्रण के लिए हेप्टाक्लोर की 5 प्रतिशत धूल का प्रयोग करना चाहिए। रोगग्रस्त एवं कीटग्रस्त पौधों (कीट के अंडे, शंखी, इल्ली आदि के साथ रोगग्रस्त पत्ती, फल एवं शाखाएं आदि) को चुनकर नष्ट करें।

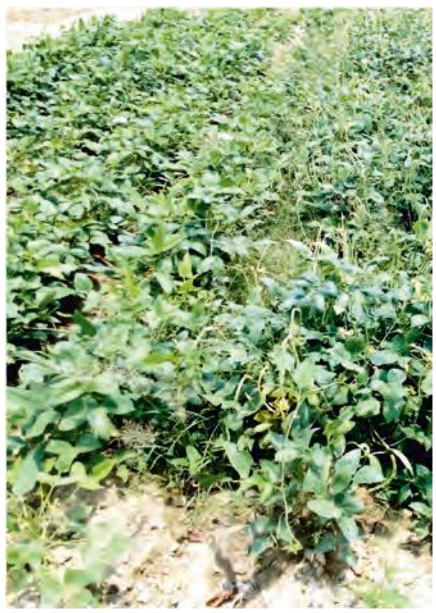

लोबिया

में किसी भी रासायनिक उर्वरकों के अधिक प्रयोग से बचें। क्यारियों में प्रचुर मात्रा में गोबर की सड़ी खाद/वर्मीकम्पोस्ट व जैव उर्वरकों जैसे-ट्राईकोडर्मा (40-50 ग्राम/100 वर्गमीटर), स्यूडोमोनास (10-12 ग्राम/100 वर्गमीटर), व एस्परजिलस (2-3 ग्राम/100 वर्गमीटर) का प्रयोग करना लाभदायक है। विभिन्न खादों में उपलब्ध पोषक तत्वों का प्रतिशत सारणी-3 में दिया गया है।

विभिन्न सब्जियों के लिए खाद (सारणी-4) एवं उर्वरकों की आवश्यक मात्रा अलग-अलग होती है। सामान्यत: गोबर की खाद/कम्पोस्ट के प्रयोग से पौध वृद्धि एवं उपज अच्छी होती है। बुआई/पौध रोपण से पहले नाइट्रोजन की 1/3, फॉस्फोरस एवं पोटाश तथा खाद की पूरी मात्रा क्यारी में प्रयोग करनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष 2/3मात्रा को 2-3 बार, बराबर-बराबर मात्रा में बांटकर खड़ी फसल में प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई

पौधों की आवश्यकतानुसार ही सिंचाई करनी चाहिए। सामान्यत: गर्मियों में एक सप्ताह और सर्दियों में 10-15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। बार-बार एवं अधिक पानी देना पौधों की बढ़वार के लिए उत्तम नहीं है। गृहवाटिका में स्प्रिंक्लर एवं टपक सिंचाई विधि से सिंचाई करने पर पानी की बचत के साथ-साथ पौधों की वृद्धि एवं विकास तेजी से होता है। वर्षाकाल में उचित जल निकास का भी ध्यान रखना चाहिए।

पौधशाला प्रबंधन

कुछ सब्जियों जैसे टमाटर, बैंगन, फूलगोभी, पत्तागोभी, गांठगोभी, हरी मिर्च, शिमला मिर्च, प्याज अदि के लिए अच्छी तरह से पौधशाला तैयार करने के लिए उठी हुई क्यारियों में शोधित बीज बोने चाहिए। पौध तैयार करने के लिए बीजों को 1.0-1.5 सें.मी. गहराई एवं 7-8 सें.मी. की आपसी दूरी पर कतारों में बुआई करनी चाहिए। बुआई के तुरंत बाद नर्सरी को हल्के पुआल से ढक देना चाहिए एवं फव्वारा विधि से सिंचाई करनी चाहिए। ढकने से बीज के अंकुरों की तेज धूप, वर्षा एवं सर्दी से रक्षा होती है। अंकुरण के तुरंत बाद पुआल को हटा देना चाहिए। अन्यथा अंकुरित बीज बढ़ जाने पर पुआल में फंसकर उखड़ जाते हैं। बीज बुआई के 21-25 दिनों बाद, पौधे रोपण के लिए तैयार हो जाते हैं। अगर पौधे खुद न उगा पाएं तो किसी विश्वस्त पौधशाला से पौधे खरीद भी सकते हैं।

हरी चौलाई

सारणी 4. गृहवाटिका में उगायी जाने वाली सब्जियों के लिए वांछित खाद की मात्रा

सब्जियां	खाद (गोबर/कम्पोस्ट) की मात्रा (कि.ग्रा.)	सब्जियां	खाद (गोबर/कम्पोस्ट) की मात्रा (कि.ग्रा.)
टमाटर	50-60	गांठगोभी	50-60
बैंगन	50-60	शलजम	50-60
हरी मिर्च	50-60	मूली	50-60
भिंडी	50-60	गाजर	50-60
लौकी	40-50	सब्जी मटर	50-60
खीरा	40-50	प्याज	50-60
करेला	40-50	लहसुन	50-60
चिकनी तोरई	40-50	पालक	50-60
नसदार तोरई	40-50	धनिया	50-60
टिंडा	40-50	मेथी	50-60
खरबूजा	40-50	फूलगोभी	50-60
तरबूज	40-50	पत्ता गोभी	50-60

सारणी 3. गृहवाटिका में प्रयोग के लिए खाद एवं इनमें उपलब्ध पोषक तत्वों का प्रतिशत

खाद	उपलब्ध पोषक तत्व(प्रतिशत)		
	नाइट्रोजन	फॉस्फोरस	पोटाश
गोबर खाद	0.4-0.5	0.25	0.5
बकरी/मेंगनी खाद	2.4	0.9	2.0
मछली खाद	6.0	0.6	0.9
नाडेप कम्पोस्ट	1.2	0.8	1.5
बायोगैस कम्पोस्ट	1.2-2.0	1.1	0.8
वर्मीकम्पोस्ट	1.5	0.3	0.56
नीम खली	5.2	1.1	1.5
सरसों खली	5.1	1.8	1.1
अरंडी खली	4.2	1.8	1.3
करंज खली	3.9	0.9	1.2
मूंगफली खली	7.3	1.5	1.3
अलसी खली	4.9	1.4	1.3
तिल खली	6.2	2.0	1.2
हड्डी का चूर्ण (बोन मील)	3.0	22.0	-

सारणी 5. सब्जियों के लिए बीज की मात्रा, बुआई/पौध रोपण का समय एवं पौध अंतरण

सब्जियां	बीज की मात्रा (ग्राम)	बुआई का समय	पौध रोपण का समय	अंतरण (कतार से कतार) (सें.मी.)	अंतरण (पौध से पौध) (सें.मी.)
टमाटर	4-5	अक्टूबर से जनवरी	फरवरी से मार्च	50-60	30-45
बैंगन	4-5	दिसंबर से जनवरी	फरवरी से मार्च	75-90	60-70
हरी मिर्च	10-20	अगस्त से जनवरी	फरवरी से मार्च	45-60	30-45
भिंडी	180-200	मार्च/जून-जुलाई	-	45	30
लौकी	40-50	फरवरी/जून-जुलाई	-	400	100
खीरा	10-30	फरवरी/जून-जुलाई	-	350	100
करेला	40-50	फरवरी/जून-जुलाई	-	350	100
चिकनी तोरई	40-50	फरवरी/जून-जुलाई	-	350	100
नसदार तोरई	40-50	फरवरी/जून-जुलाई	-	350	100
टिंडा	40-50	फरवरी/जून-जुलाई	-	350	100
खरबूजा	20-30	फरवरी	-	400	100
तरबूज	30-40	फरवरी	-	400	100
फूलगोभी	10-12	अगस्त से सितंबर	सितंबर-अक्टूबर	45-60	30-45
पत्ता गोभी	10-12	अगस्त से सितंबर	सितंबर-अक्टूबर	30-45	30-45
गांठगोभी	100-200	अगस्त से सितंबर	सितंबर-अक्टूबर	45-60	8-10
शलजम	40	अगस्त से सितंबर	-	30-50	8-10
मूली	10-12	वर्ष पर्यन्त	-	30-40	8-10
गाजर	5-6	सितंबर से अक्टूबर	-	30	8-10
सब्जी मटर	5000-6000	सितंबर से अक्टूबर	-	30-45	20-30
प्याज	100	सितंबर से अक्टूबर	नवंबर-दिसंबर	20-30	10-15
लहसुन	10	सितंबर से अक्टूबर	-	15-20	5-10
पालक	300	सितंबर से अक्टूबर	-	15-20	15-20
धनिया	300	सितंबर से अक्टूबर	-	15-20	15-20
मेथी	120	सितंबर से अक्टूबर	-	15-20	15-20

सस्य प्रबंधन

विभिन्न सब्जियों के पौध तैयार होने के बाद अलग-अलग क्यारियों में पौधों को पर्याप्त दूरी पर लगाना चाहिए। उनको बढ़वार के लिए उचित जगह मिल सके। सब्जियों के लिए आवश्यक बीज की मात्रा, बुआई/पौध रोपण का समय एवं पौध अंतरण को सारणी-5 में दिया गया है।

सब्जियों की तुड़ाई

सब्जियों की अच्छी तरह बढ़वार हो जाने पर उपयुक्त अवस्था एवं उचित समय पर ही तुड़ाई/कटाई सावधानीपूर्वक तेज धारदार

लाल चौलाई

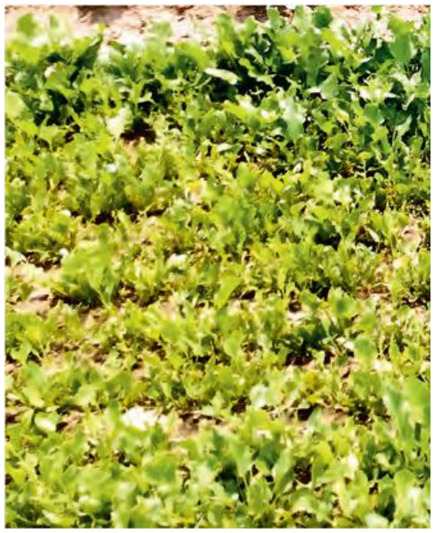

पालक

चाकू से करनी चाहिए। इससे पौधे को अतिरिक्त नुकसान नहीं पहुंचता है। पैदावार भी ज्यादा मिलती है और उनका स्वाद भी बढ़िया होता है। सब्जियों की तुड़ाई/कटाई सुबह या सायंकाल ही करनी चाहिए।

ताजी सब्जियों का रखरखाव

तुड़ाई के उपरांत सब्जियों का ताजापन धीरे-धीरे कम होने लगता है। ताजेपन को बनाए रखने के लिए निम्नलिखित सावधानियां बरतनी चाहिए:

- सब्जियों को सूर्य की सीधी रोशनी में न रखें।
- सब्जियों को फ्रिज में रखने से ताजापन काफी दिनों तक बरकरार रहता है।
- हरी सब्जियों को पॉलीथीन पैक में न रखें। इससे गलने व सड़ने का डर रहता है।
- हरी सब्जियों को अखबार में लपेटकर भी रख सकते हैं।
- सब्जियों को साफ-सुथरी, ठंडी व शुष्क जगह पर रखें।

कृषि रसायनों के प्रयोग में सावधानी रखें

यह सत्य है कि कीटनाशक एवं फफूंदनाशक सामान्यत: मनुष्यों के लिए ज्यादा नुकसानदायक होते हैं। वास्तविकता यह है कि इनके प्रयोग के बिना खेती करनी भी मुश्किल है। गृहवाटिका में जब भी इन रसायनों का प्रयोग करें, सब्जियों की तुड़ाई के बाद करें। जो सब्जियां गृहवाटिका में रह जाएं, कुछ दिन तक इंतजार करने के बाद उनकी तुड़ाई करें। लगभग 7-8 दिनों के बाद इन रसायनों का हानिकारक प्रभाव धीरे-धीरे स्वत: खत्म हो जाता है। सब्जियों को पकाने से पहले अच्छी तरह से जरूर धो लेना चाहिए ताकि सब्जियों की सतह पर लगे हानिकारक रसायन, धूल आदि हट जाएं। ■

कृषक अनुभव

लहसुन की फसल में जल की बूंद-बूंद कीमती

डा. रामराज मीणा[1] और **डा. राजेश कुमार बागड़ी**[2]
कृषि विज्ञान केन्द्र, झालावाड़

टपक सिंचाई द्वारा पानी की बचत

झालावाड़ जिले की झालरापाटन पंचायत समिति का गांव है, दित्याखेड़ी। इनके पास संतरे का बगीचा भी है। इनके द्वारा पशुपालन के साथ-साथ कृषि में नवीन यंत्रों का उपयोग भी किया गया है। जिले के किसान लहसुन की खेती 25-30 वर्षों से करते आ रहे हैं, परंतु दिनोंदिन घटता जल स्तर चिंता का विषय बनता जा रहा है। श्री पूनम चन्द पाटीदार ने जल संकट की इस स्थिति को समझा और वर्ष 2010 में अपने खेत पर कम लागत वाली पॉली ट्यूब टपक सिंचाई प्रणाली स्थापित की। इसमें 15-20 प्रतिशत उत्पादन बढ़ोतरी के साथ-साथ 60-70 प्रतिशत पानी की बचत हुई। यह प्रयोग गांव में विश्वास का साक्षी बना। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए आत्मा योजना के अंतर्गत इन्हें वर्ष 2011 में सम्मानित भी किया जा चुका है।

श्री पाटीदार ने बताया कि वे कृषि विज्ञान केन्द्र, झालावाड़ तथा कृषि विभाग एवं उद्यान विभाग, झालावाड़ से गत 10 वर्षों से संपर्क में हैं। यहां पर प्रशिक्षणों में पानी बचाकर खेती का उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया जाता है। उन्होंने लहसुन की फसल में पहली बार इस तकनीक का उपयोग किया, जिसका परिणाम आशा से अधिक प्राप्त हुआ।

कृषि विज्ञान केन्द्र के वैज्ञानिक समय-समय पर इनके खेतों का भ्रमण कर जल संरक्षण पर आधारित खेती से उत्पादन बढ़ाने पर प्रशिक्षण आयोजित करते हैं। इसके अतिरिक्त संस्थागत प्रशिक्षणों में प्रायोगिक कार्य भी इन्हें सीखने के मौके मिले हैं। इससे आज वे अनमोल पानी बचाकर उत्पादन बढ़ा रहे हैं। पाटीदार बताते हैं कि आज भी कई किसान अधिक सिंचाई को ही उत्पादन बढ़ाने का आधार मानते हैं, जो पूर्णतः गलत है। उनका कहना है कि खेत में बूंद-बूंद पानी देकर कण-कण उत्पादन बढ़ाया जा सकता है तो व्यर्थ ही पानी क्यों बहाया जाए।

सारणी में वर्णित लाभ उन्हें वर्तमान में प्राप्त हो रहे हैं। अन्य किसान भी इनका लाभ ले सकते हैं। जहां पर कृषक पानी की कमी के कारण फसल नहीं ले पा रहे हैं या पर्याप्त सिंचाई का पानी नहीं है वहां पर भी कृषक पानी बचाने पर अपना अमूल्य योगदान दे सकते हैं।

सारणी 1. कम लागत वाली पॉली ट्यूब टपक सिंचाई का तुलनात्मक आय-व्यय ब्यौरा

क्र.सं.	कार्य विवरण	खुली सिंचाई	बूंद-बूंद सिंचाई
1.	जल की आवश्यकता	अधिक	खुली सिंचाई का 30-40 प्रतिशत
2.	सिंचाई में श्रमिक की आवश्यकता	5 श्रमिक/सिंचाई=10×150×5=4500 रुपये	एक श्रमिक/सिंचाई = 1500
3.	बिजली की खपत	अधिक	कम
4.	भूमि की दशा	कठोर हो जाती है	भुरभुरी बनी रहती है
5.	पोषक तत्व	अधिक	कम
6.	खुदाई	कठिन	आसान
7.	खुदाई के समय कंदों का टूटना/हैक्टर	लगभग 10 क्विंटल	50 कि.ग्रा.
8.	उत्पादन/हैक्टर	100 क्विंटल	120 क्विंटल
9.	आय 5,000 रुपये क्विंटल साबुत कंद	90 × 5,000 = 4,50,000 रुपये	119.50 × 5000 = 5,09,750 रुपये
	आय 2500 रुपये क्विंटल क्षतिग्रस्त कंद	10 × 2,500 = 25,000 रुपये 4,75,000 रुपये	0.5 × 2,500 =1,250 रुपये 6,11,000 रुपये
10.	सिंचाई विधि की लागत	शून्य	25,000/हैक्टर/4 वर्ष=6250 प्रतिवर्ष/हैक्टर
11.	समग्र आय	4,75,000 रुपये	6,11,000 रुपये

अतिरिक्त आय = आय टपक सिंचाई से-आय सामान्य सिंचाई से
6,11,000-4,75,000 = 1,36,000 रुपये
अतिरिक्त आय =1,36,000 रुपये
नोटः यह आय-व्यय वर्ष 2010 के लहसुन के भाव 50 रुपये प्रति कि.ग्रा. से निकाला गया है, जो बाजार भाव के अनुसार घट-बढ़ सकता है।

[1]विषय विशेषज्ञ, उद्यान विज्ञान; [2]विषय विशेषज्ञ पौध व्याधि

श्री पूनम चन्द बताते हैं कि कृषि विज्ञान केन्द्र, झालावाड़ से संपर्क करने पर उन्होंने पाया कि वर्तमान में खेती को वैज्ञानिक विधि से करके ही अधिक लाभप्रद बनाया जा सकता है।

बूंद-बूंद सिंचाई विधि से उर्वरक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों को सिंचाई के साथ-साथ प्रयोग किया जा सकता है। कम उर्वरकों से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही फसल को आवश्यकतानुसार पोषण दिया जा सकता है।

गुलाब के बहुउपयोगी परिरक्षित उत्पाद

बिबवे भूषण, मनोज कुमार महावर, पंकज कुमार कनौजिया, कीर्ति जलगांवकर, भारत भूषण और **विजय सिहं मीणा**
भाकृअनुप-केन्द्रीय कटाई उपरांत अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी संस्थान, अबोहर-152116 (पंजाब)

प्राचीन काल से ही गुलाब को इसकी सुंदरता, रूप, आकार, औषधीय गुण एवं सुगंध के कारण फूलों का राजा माना गया है। गुलाब का उपयोग सुंदरता, सजावट, सुशोभीकरण गुण एवं पर्यावरण सुधार की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। गुलाब के फूल डाली सहित, कट फ्लावर तथा पंखुड़ी फ्लावर के रूप में बाजार में बेचे जाते हैं। गुलाब की खेती देश के किसानों के लिए ही नहीं अपितु निर्यात के दृष्टिकोण से भी बहुत महत्वपूर्ण है। सजावट, गुलदस्ते व गले के हार आदि बनाने के लिए उपयोग में लाए जाने के साथ-साथ इसके उपयोग से गुलाब जल, गुलाब तेल, गुलकंद, गुल रोगन, गुलाब इत्र आदि उत्पादों का भी उत्पादन किया जाता है। मानव सभ्यता के विकास के साथ ही मनुष्य द्वारा मुख्य कृषि फसलों के साथ पुष्पीय पौधों की फसलों की भी खेती व्यावसायिक तौर पर की जाती रही है। आज के औद्योगिक युग में खेती योग्य भूमि घटने के कारण यह जरूरत है कि जीविकोपार्जन के लिए खेती से जुड़े नए संसाधनों एवं आयामों की तरफ रुख किया जाए। इसी संदर्भ में फूलों की खेती एक अच्छा विकल्प साबित हो रही है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, भारत द्वारा गुलाब का तेल अमेरिका, बुल्गारिया, रूस, तुर्की जैसे देशों से आयात किया जाता है। गुलाब के प्रसंस्करण और परिरक्षण के लिए व्यावसायिक उत्पादन करने से आयात पर खर्च होने वाली बहुमूल्य विदेशी मुद्रा को बचा सकते हैं। साथ ही गुलाब से बने विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पादों के विक्रय से किसानों की आर्थिक आय में वृद्धि भी संभव है।

गुलाब रोसा जीनस का बारहमासी पौधा है, जो 'रोसीयासी' फैमिली से संबंधित है। आमतौर पर, गुलाब का पौधा ऊंचाई में 4-5 फुट का होता है और तने में असमान कांटे लगे होते हैं। गुलाब के फूल में कई औषधीय गुण होते हैं। परिणामस्वरूप इसे शामक, प्रहारनाशक और एंटीडिप्रेसेंट के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। विभिन्न रूपों में इसका उपयोग तनाव की स्थितियों के उपचार, अल्सर, हृदय रोग

गुलाब की सूखी पत्तियां

गुलकंद

जैसे रोगों के इलाज के लिए भी किया जा रहा है। गुलाब के सुंदर फूल अपनी आकर्षक बनावट, विभिन्न आकार-प्रकार, मन को लुभाने वाले रंगों और विभिन्न उपयोगिताओं के कारण सभी पुष्पों में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। भारत में गुलाब की खेती मुख्यत: गुजरात, राजस्थान (अजमेर,पुष्कर, हल्दी घाटी), उत्तर प्रदेश (कन्नौज, अलीगढ़) कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश और आंध्र प्रदेश आदि राज्यों में की जाती है।

गुलाब जल

गुलाब जल, ज्यादातर वाष्प या जल-आसवन पद्धति से निकाला जाता है। इस प्रक्रिया में गुलाब की पंखुड़ियों को पानी में उबाला जाता है तथा संघनित भाप को इकट्ठा किया जाता है। गुलाब जल का उपयोग फारसी और मध्य पूर्वी देशों में मिठाइयों या शरबत में किया जाता है। इसके अलावा शादी, धार्मिक समारोहों में सुगंधित इत्र के रूप में भी इसका प्रयोग होता है। आंशिक तौर पर इसे कुकीज और अन्य मिठाइयों को तैयार करने में भी डाला जाता है। भारत में गुलाब जल का उपयोग आंखों को साफ करने के लिए भी किया जाता है। प्राकृतिक सुगंध और मॉइस्चराइजर के लिए चेहरे पर सीधे स्प्रे के रूप में भी इसे उपयोग में लाया जाता है। इसमें शरीर और आंखों को ठंडा रखने के गुण होते हैं। इस कारण इसे आंखों के लोशन के रूप में भी काम में लाया जाता है।

गुलाब तेल

गुलाब तेल, पंखुडियों से निष्कर्षित एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक उत्पाद है। मीठी सुगंध के अलावा, इसमें औषधीय गुण होते हैं। इसलिए आयुर्वेदिक उपचार में भी इसका प्रयोग किया जाता है। गुलाब तेल वाष्प-आसवन, जल-आसवन, सॉलवेंट निष्कर्षण आदि पद्धति से प्राप्त किया जाता है। गुलाब की 'रोसा दमिस्केना', 'रोसा गैलिका', 'रोसा सेटिफोलिया' और 'रोसा बोर्बॉनिना' जैसी किस्में तेल का अच्छा स्रोत मानी जाती हैं। उदाहरण के तौर पर, 'रोसा दमिस्केना' किस्म के 4000 कि.ग्रा. फूलों से एक कि.ग्रा. तक गुलाब का तेल निकाला जा सकता है।

गुलाब अगरबत्ती

गुलाब शरबत

गुलाब शरबत

गुलाब का शरबत अपनी ठंडी प्रकृति के कारण बुखार जैसे रोगों में सहायक साबित होता है। गर्मियों के मौसम में मूत्र में जलन होना आम समस्या होने लगती है व गुलाब शरबत के नियमित सेवन से इसमें राहत मिलती है। आंखों में जलन होना, सूखापन या आंखे लाल होना जैसी समस्याओं के निवारण में भी यह उपयुक्त है। पेट में जलन होने पर गुलाब शरबत के सेवन से राहत मिलती है। गुलाब शरबत बनाने की सामग्री एवं सुनियोजित विधि को नीचे वर्णित किया गया है:

गुलाब की पत्तियां	-	1 कि.ग्रा.
पानी	-	250 ग्राम
चीनी	-	2 कि.ग्रा.
नीबू का रस	-	5-7 ग्राम
गुलाब एसेंस	-	4-5 बूंद
लाल रंग	-	2-3 बूंद
सोडियम बेंजोएट	-	1/4 चम्मच

विधि

सर्वप्रथम गुलाब की पत्तियों को धोकर एक कप पानी में भिगो दें। आधे घंटे तक भीगने के बाद उसे उबालें व उबालते समय ढककर रखें। दस मिनट तक उबालने के बाद पत्तियों को हाथ से मसल लें। 250 ग्राम पानी व 2 कि.ग्रा.

गुलाब की खेती के लाभ

फूलों की खेती को एक संपूर्ण व्यावसायिक उद्योग की नजर से अगर आंका जाए तो कमल के बाद गुलाब के फूलों का स्थान महत्वपूर्ण है। हमारे देश की विविधतापूर्ण जलवायु गुलाब की खेती के लिए अनुकूल होने के बावजूद भी इसकी खेती यहां अच्छे पैमाने पर नहीं की जाती। गुलाब के संवर्धन, संरक्षण और व्यावसायिक उत्पादन करने से एक ओर किसान जहां अपनी पूंजी को बचा सकते हैं, वहीं 'गुलाब' से बने विभिन्न उत्पादों से इनकी आय में वृद्धि भी हो सकती है। यह सर्वविदित है कि फूलों का राजा गुलाब न केवल सौंदर्य का प्रतीक है, अपितु इसका उपयोग शरबत, इत्र, तेल, गुलकंद पंखुड़ी आदि उत्पाद बनाने के रूप में भी बहुप्रचलित है। भारत के विभिन्न पुष्प अनुसंधान संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों एवं कृषि विज्ञान केन्द्रों से गुलाब के मूल्यवर्धन के लिए प्रशिक्षण प्राप्त कर बेरोजगार युवक, युवतियां एवं ग्रामीण महिलाएं भी इन मूल्यवर्धित उत्पादों को तैयार कर बाजार में बेचकर आय का माध्यम बना सकती हैं। इन प्रसंस्करित उत्पादों को तैयार करने में बड़े संयंत्रों की आवश्यकता नहीं होती। अत: महिलाएं घर बैठे इन उत्पादों को तैयार कर बाजार में उनके विक्रय से अच्छी कीमत प्राप्त कर सकती हैं। ग्रामीण महिलाएं स्वयं सहायता समूह के माध्यम से भी इनका विपणन कर आत्मनिर्भर बन सकती हैं।

चीनी को मिलाकर गर्म करें और 5-7 ग्राम नीबू का रस या चार नीबू का रस मिला दें। पानी-चीनी के घोल को एक बार उबाल दें और ठंडा होने पर छनी हुई गुलाब की पत्तियों का रस मिला दें। अब गुलाब एसेंस, लाल रंग व सोडियम बेंजोएट को थोड़े शर्बत में घोलकर मिला दें व तैयार शर्बत को साफ-स्वच्छ कांच की बोतल में संग्रहित करें।

गुलाब तेल

गुलकंद

गुलकंद, अम्लता के इलाज के लिए एक उपयुक्त घरेलू उपचार है। यह आलस्य, मांसपेशी का दर्द, खुजली, थकान और गर्मी की अतिवृद्धि जैसे तकलीफों से छुटकारा पाने के लिए टॉनिक के रूप में उपयोग किया जाता है। इसे रक्त शुद्ध करने, दृष्टि और स्मृति सुधार स्वरूप उपयोगी आंका जाता है। गुलकंद बनाने की प्रक्रिया और विधि इस प्रकार है:

सामग्री

ताजे गुलाब की पत्तियां	-	1 कि.ग्रा.
चीनी	-	2 कि.ग्रा.

विधि

सर्वप्रथम गुलाब की पत्तियों को धो लें। अब एक जार में एक परत (लगभग एक इंच मोटी) गुलाब की पत्तियों की लगाएं। इसके ऊपर चीनी की परत लगाएं। एक कि.ग्रा. चीनी का उपयोग करते हुए गुलाब की पत्तियों एवं चीनी को परत दर परत लगाएं व जार में ऊपर तक भर दें। ध्यान रहे, ऊपरी परत चीनी की होनी चाहिए। इस जार को धूप में एक दिन के लिए रखें। अगले दिन बाकी बची एक कि.ग्रा. चीनी में से आधी चीनी (500 ग्राम) डालकर पुन: धूप में रख दें। तीसरे दिन सारी चीनी पिघल जाने पर बाकी बची चीनी (500 ग्राम) भी डालकर रख दें। अब जार को 4-5 दिनों तक धूप में रखने व अच्छी तरह हिलाने पर गुलकंद तैयार हो जाएगा।

पंखुड़ी/गुलाब की सूखी पत्तियां

गुलाब की सूखी पत्तियों का उपयोग मिठाइयां, औषधीय उत्पाद, अगरबत्ती, धूपबत्ती या सौंदर्य प्रसाधनों में किया जाता है। उच्च गुणवत्ता वाली गुलाब की सूखी पत्तियां बनाने की प्रक्रिया इस प्रकार है:

ताजे गुलाब की पत्तियां	-	1 कि.ग्रा.
मलमल का कपड़ा	-	ढकने के लिए
अखबार या सफेद कागज	-	फैलाने के लिए

विधि

सर्वप्रथम गुलाब की पत्तियों को धो लें व पानी निकालने के बाद इन्हें अखबार या सफेद कागज पर फैला दें और इस पर मलमल का कपड़ा ढक दें। अब इन्हें छाया में 2-3 दिनों तक सुखाएं। सूख जाने पर वायुरहित साफ डिब्बों में संग्रहित करें। इन सूखी पत्तियों का प्रयोग आप ताजे गुलाब की पत्तियों के स्थान पर शरबत बनाने या विभिन्न तरह के मीठे पकवानों को सजाने के तौर पर कर सकते हैं।

गुलाब मूल्यवर्धन की महत्ता

कटाई उपरांत गुलाब की जीवन आयु लघु होती है और सुरक्षित भंडारण के उपयुक्त तकनीकी साधनों के अभाव में किसान इसे अतिशीघ्र विपणन के लिए भेज देते हैं। मुख्य मौसम के दौरान बाजार में गुलाब प्रचुर मात्रा में होने के कारण किसानों को इसका उचित मूल्य नहीं प्राप्त होता। इस कारण उन्हें आर्थिक दृष्टि से नुकसान उठाना पड़ता है। इसी संदर्भ में, गुलाब का मूल्यवर्धन एक ऐसी तकनीक है, जो न केवल गुलाब के उत्पादों को दीर्घायु प्रदान करता है, अपितु किसानों को लाभकारी मूल्य भी दिला सकता है। उचित व उपयुक्त प्रसंस्करण की विधि द्वारा, गुलाब फूलों को अनेक मूल्य संवर्धित उत्पादों में परिवर्तित किया जा सकता है। इससे गुलाब जल, गुलकंद, गुलाब इत्र, गुलाब तेल आदि औषधियां बनाई जाती हैं, जिनकी बाजार में व्यावसायिक मांग है।

गुलाब जल

गुल रोगन

गुल रोगन बनाने के लिए गुलाब की 'रोसा दमिस्केना' किस्म की 300 ग्राम पत्तियां एक लीटर तिल के तेल में डुबोकर सूरज की रोशनी में एक पखवाड़े के लिए रखें। इसके बाद इस मिश्रण को कपड़े से छानकर बोतल में सुरक्षित रख दें। गुल रोगन को टॉनिक की तरह उपयोग करें। इसके अलावा यह पीड़ा निवारक भी है और मेनिनजाइटिस (दिमागी बुखार) के शुरुआती इलाज में भी लाभकारी है।

रोज हिप्स

रोज हिप्स का तात्पर्य गुलाब की पंखड़ियों के नीचे के हिस्से से होता है तथा इसमें गुलाब के बीज होते हैं। ताजा रोज हिप्स में प्रचुर मात्रा में विटामिन 'सी' होता है, जिसके कारण इसे ठंड और विटामिन 'सी' की कमी (स्कर्वी) के इलाज में उपयोग किया जाता है। सॉस, जैम, जैली, पुडिंग आदि की तैयारी के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। सूखे एवं बारीक पीसे हुए रोज हिप्स, हर्बल चाय बनाने में उपयोगी होते हैं। ये पाचन तंत्र संक्रमण और त्वचा रोगों की रोकथाम में भी सहायक होते हैं।

पॉट पौरी

पॉट पौरी स्वाभाविक रूप से पौधों के विभिन्न हिस्सों का मिश्रण है, जो भवनों के अंदर एक सभ्य प्राकृतिक सुगंध प्रदान करता है। यह आमतौर पर एक सजावटी कटोरे में रखा जाता है या कपड़े से बने थैलों में बांधकर रखा जाता है। गुलाब की पंखुड़ियां और पत्तियां पॉट पौरी की लिए एक बहुत अच्छी आधार सामग्री बनाते हैं। विभिन्न रंगों और सुगंधों के गुलाब की पंखुड़ियों का उपयोग इसमें विविधता पैदा करने के लिए किया जा सकता है। ■

ऑयस्टर मशरूम का उत्पादन

मनोज कुमार पाण्डेय[1], **अभय कुमार सिंह**[1], **अजय तिवारी**[1], **नीरज सिंह**[2] और **बिजेन्द्र सिंह**[2]

ऑयस्टर मशरूम उत्पादन एक ऐसा व्यवसाय है, जिसमें कम क्षेत्रफल, समय और लागत पर किसान भाई न्यूनतम परिश्रम कर अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इसकी खेती के लिए ठंडा मौसम, अनुकूलतम तापमान, आर्द्रता एवं शुद्ध स्पॉन की आवश्यकता होती है। यह सामान्यत: बंद कमरों के अंदर नियंत्रित तापमान एवं वातावरण में उगाया जाता है। पर्वतीय क्षेत्रों में इसे लगभग पूरे वर्ष उगाया जा सकता है। मैदानी क्षेत्रों में इसे अगस्त से मार्च तक उगाया जाता है। इसके लिए कृषि विज्ञान केन्द्र, देवरिया के कृषि विशेषज्ञों द्वारा वर्ष 2012 से प्रशिक्षण, प्रदर्शन एवं साहित्य के माध्यम से किसानों, नवयुवकों एवं युवतियों को प्रशिक्षित कर स्वरोजगार के लिए प्रेरित किया जा रहा है। इससे प्रोत्सहित होकर किसान एवं नवयुवक रोजगार के रूप में इसे अपना रहे हैं।

पूर्वी उत्तर प्रदेश की जलवायु ऑयस्टर मशरूम (ढिंगरी मशरूम) के अनकूल होने के साथ-साथ यहां की धान-गेहूं फसल प्रणाली इसकी खेती को और उपयुक्त बनाती है। यहां पर धान का पुआल, गेहूं का भूसा एवं कृषि फसलों से प्राप्त होने वाले अन्य अवशेषों जैसे मक्का, ज्वार, बाजरा, गन्ना, चना, मटर इत्यादि के तने व पत्तियां पर्याप्त मात्रा में आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। इनका ऑयस्टर मशरूम उत्पादन के लिए प्रयोग किया जाता है।

ऑयस्टर मशरूम को शरद व ग्रीष्म ऋतुओं में उगाया जाता है। पौष्टिकता की दृष्टि से बटन मशरूम की भांति ढींगरी में भी विटामिन व खनिज लवणों की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है। ऑयस्टर मशरूम में प्रोटीन 2.5, वसा 0.2, कार्बोहाइड्रेट्स 5.2, रेशा 0.6, नमी 90.2 प्रतिशत व ऊर्जा 35 कैलोरी (ताजे मशरूम के आधार पर) पाई जाती है। यह हृदय रोग, मधुमेह व मोटापे से ग्रस्त व्यक्तियों के लिए उपयुक्त भोजन है। इसकी खेती करने की विधि सरल एवं कम खर्चीली है। इस वजह से ग्रामीण क्षेत्रों के भूमिहीन व सीमांत किसानों तथा गरीब लोगों के लिए यह आय का एक उत्तम साधन है।

ऑयस्टर मशरूम उगाने की विधि

ऑयस्टर मशरूम की उत्पादन विधि अन्य मशरूम की उत्पादन विधि से काफी भिन्न है। इसको सीधे ही कृषि फसलों से प्राप्त अवशेषों पर उगाया जाता है। श्वेत बटन मशरूम की भांति खाद (कम्पोस्ट) बनाने की

आय का स्रोत मशरूम

आवश्यकता नहीं होती है। इससे समय तथा धन दोनों की बचत होती है।

प्रजाति का चुनाव

भारत में ऑयस्टर मशरूम की खेती विभिन्न प्रकार के कृषि अवशेषों पर की जाती है, लेकिन गेहूं व धान का भूसा बहुप्रचलित कृषि अवशेष हैं।

ऑयस्टर मशरूम की खेती में प्रयोग होने वाले विभिन्न कृषि अवशेषों को हानिकारक जीवाणुओं से मुक्त करना पड़ता है। इसके लिए चुने कृषि अवशेषों (पोषाधार) को गर्म पानी विधि या रासायनिक विधि द्वारा उपचारित किया जाता है। इन दोनों विधियों का विवरण निम्नलिखित है:

गर्म पानी से उपचार

- गेहूं का भूसा या धान के पुआल की कुट्टी को काट कर छोटे बोरे में भरकर रात भर साफ पानी में डुबोकर रखा जाता है।
- भीगे हुए गेहूं या धान के बोरे को गर्म पानी (80^0-90^0 सेल्सियस तापमान) में डुबोकर लगभग 40 मिनट तक रखा जाता है। गीले भूसे को गर्म पानी में डाला जाता है तो पानी का तापमान घट जाता है। अत: यह आवश्यक हो जाता है कि पानी को फिर उपयुक्त तापमान पर लाया जाए। जब पानी उबलने लगे तो लगातार 40 मिनट तक उबालें। उसके पश्चात कृषि अवशेषों को 40 मिनट तक इस गर्म पानी में रखा जाता है।

बीजाई करना

बैग में माइसिलियम का विकास

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, मल्हना, देवरिया-274506 (उत्तर प्रदेश); [2]भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी-221305 (उत्तर प्रदेश)

तुड़ाई योग्य कलिकाएं

भंडारण व उपयोग

ऑयस्टर मशरूम की भंडारण अवधि बटन मशरूम से काफी अधिक होती है। इस मशरूम को सामान्य तापमान (कमरे के तापमान) पर 24 से 48 घंटे तक ताजे रूप में रखा जा सकता है। इस प्रकार प्राप्त मशरूम को सीधे आहार के रूप में प्रयोग कर सकते हैं। इसे धूप में सुखाकर पॉलीथीन के लिफाफों में बंद रख सकते हैं। इसको भविष्य में सब्जी में प्रयोग किया जा सकता है। सूखे हुए मशरूम को पीसकर पाउडर भी बनाया जा सकता है। इसका उपयोग विभिन्न प्रकार के मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे-बिस्कुट, पापड़, बड़ियां, चटनी, नूडल्स आदि बनाने में किया जाता है। आवश्यकता से अधिक उत्पादन होने पर इसका अचार बनाकर बाजार में बेचा जा सकता है। ऑयस्टर मशरूम का उपयोग पकौड़ा बनाकर, सब्जी/मिश्रित सब्जी/मशरूम-मटर सब्जी, मशरूम सूप, मशरूम परांठा, कोफ्ता, कटलेट व मशरूम खीर बनाकर किया जा सकता है।

- गर्म पानी से भूसे को निकालकर पॉलीथीन शीट पर फैला दें एवं पानी का रिसाव पूरा होने दें। भूसे से पानी निकलने व ठंडा हो जाने पर यह बीजाई के लिए तैयार हो जाता है।

रासायनिक उपचार

गर्म पानी उपचार विधि आज मंहगी साबित होती है। इसे लघु स्तर पर अपनाना उचित रहता है। गर्म पानी उपचार विधि यद्यपि अच्छी है, लेकिन इसे अपनाना थोड़ा कठिन होता है और इस विधि से बीमारी का खतरा भी बना रहता है।

गर्म पानी की बजाय रासायनिक विधि से भी भूसे का निर्जीवीकरण किया जा सकता है। इसके लिए भूसे या किसी अन्य कृषि अवशेष को फफूंदनाशी (बावस्टिन) और जर्मनाशी (फार्मेलीन) द्वारा उपचारित किया जाता है। इस विधि का विवरण इस प्रकार है:

- किसी ड्रम में 90 लीटर पानी लेकर 10-12 कि.ग्रा. भूसा डुबो दिया जाता है।
- इसके साथ ही एक बाल्टी में 7.5 ग्राम बावस्टिन और 125 मि.ली. फार्मेलीन को 10 लीटर पानी में मिलाकर घोल

बीजाई किए हुए बैग को बांधना

बना लिया जाता है।
- बाल्टी में बनाए घोल को भूसे वाले ड्रम में उड़ेल दिया जाता है। इसे प्लास्टिक शीट से ढक दिया जाता है तथा ऊपर से वजन रख देते हैं, ताकि भूसा ऊपर न उठे और पानी में डूबा रहे।
- लगभग 16-18 घंटे बाद भूसे को ड्रम से निकालकर पॉलीथीन की शीट (चादर) या पक्के फर्श पर फैला दिया

बीजाई किया हुआ बैग

जाता है। इस प्रकार भूसे से अतिरिक्त पानी निचुड़ जाता है तथा फार्मेलीन की महक पूरी तरह से खत्म हो जाती है। यह स्थिति लगभग एक घंटे में आ जाती है।

उपरोक्त में से किसी एक विधि से उपचारित किया गया पोषाधार (माध्यम) बीजाई के लिए तैयार हो जाता है। 10-12 कि.ग्रा. सूखा भूसा उपचार के बाद लगभग 40-45 कि.ग्रा. हो जाता है।

प्रबंधन

कवक जाल (माइसिलियम) फैलाव के लिए कमरे का तापमान आवश्यकतानुसार बनाए रखा जाता है। लगभग दो सप्ताह तक इन बैगों में ढींगरी का कवक जाल (माइसिलियम) बढ़ता रहता है और सफेद जाल सा बन जाता है। कवक जाल भूसे की पूरी परत को ढक लेता है। बैग बिल्कुल सफेद दिखाई देने लगता है। इस समय पॉलीथीन बैग को काटकर हटा देते हैं। इन्हें बहुस्तरीय ढांचों पर एक-दूसरे से एक-एक फुट की दूरी पर रख देते हैं। इन खोले गए बैगों पर प्रतिदिन पानी का छिड़काव किया जाता है।

जिस कमरे में बैग रखे जाते हैं वहां पर स्वच्छ हवा का उपलब्ध होना जरूरी है। इसलिए दिन में कुछ समय के लिए खिड़कियां खुली रखनी चाहिए। खिड़कियों में महीन जाली लगी होनी चाहिए। इससे बाहर से हवा

बीजाई करना

बीजाई करने से पहले, बीजाई स्थल और बीजाई में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों को 2 प्रतिशत फार्मेलीन घोल से उपचारित करें। बीजाई करने वाले श्रमिक अपने हाथों को साबुन से धोएं ताकि अवांछनीय संक्रमण से बचा जा सके। इसके बाद पॉलीथीन के प्रत्येक बैग में 4-5 कि.ग्रा. बीजित भूसा भरते हैं तथा लिफाफों का मुंह अच्छी तरह से बंद कर देते हैं। इनमें लकड़ी से बारीक छेद कर देते हैं। इन बीजित बैगों को उत्पादन कक्ष में बनाए गए बहुस्तरीय ढांचों (रेक्स) पर सटाकर रख देते हैं। बैगों को उत्पादन कक्ष में रखने के 24 घंटे पहले उत्पादन कक्ष में 2 प्रतिशत फार्मेलीन के घोल का छिड़काव कर उत्पादन कक्ष को बंद कर देते हैं, ताकि कक्ष में यदि हानिकारक जीवाणु हों तो नष्ट हो जाएं। इस उत्पादन कक्ष को बैग रखने के कुछ घंटे पहले खोलते हैं।

खोले हुए बैग में स्पॉनिंग

तुड़ाई

पैकिंग

के साथ कीड़े-मकोड़े प्रवेश नहीं कर सकें। कमरे में नमी 80-85 प्रतिशत एवं आवश्यक तापमान बनाए रखना चाहिए। ढींगरी खुंब उत्पादन में नमी व तापमान के अतिरिक्त प्रकाश का भी बहुत महत्व है। अंधेरा होने पर कलिकाओं का विकास नहीं हो पाता है। अत: दिन में लगभग 4-5 घंटे ट्यूबलाइट या बल्ब जलाकर प्रकाश देना चाहिए। ऐसी स्थिति बनाए रखने पर 6 से 10 दिनों के अंदर मशरूम की छोटी-छोटी कलिकाएं बनने लगती हैं, जो तीन-चार दिनों के अंदर ही बड़ी होकर पंख का आकार ग्रहण कर लेती हैं।

मशरूम की तुड़ाई

जब छोटी-छोटी कलिकाएं पंख का आकार ग्रहण कर किनारे से ऊपर की ओर मुड़ने लग जाती हैं तब इन्हें मरोड़कर तोड़ लेना चाहिए। इस तरह से कुल तीन या चार फसल चक्रों में 6 सप्ताह में दस कि.ग्रा. सूखे भूसे से लगभग 6-7 कि.ग्रा. ऑयस्टर मशरूम प्राप्त होता है।

आय

आमदनी की दृष्टि से ऑयस्टर मशरूम, बटन मशरूम की तुलना में अधिक मुनाफा देता है। इसमें समय व धन कम लगता है तथा बाजार मूल्य बटन मशरूम के समान ही मिलता है। एक कि.ग्रा. ऑयस्टर मशरूम पैदा करने में लगभग 10-15 रुपये तक का खर्च आता है तथा बाजार में ताजा मशरूम 50-75 रुपये प्रति किलो भाव से बिकता है। इस प्रकार प्रति कि.ग्रा. 40-60 रुपये तक आमदनी प्राप्त हो जाती है। इसके साथ ही कलिकाओं की तुड़ाई के उपरांत भूसे का अवशेष प्राप्त होता है। इसका कम्पोस्ट बनाकर खेत में प्रयोग किया जाता है।

इस तरह किसान भाई उपरोक्त विधि को अपनाकर मशरूम उत्पादन का कार्य आसानी से कर सकते हैं। इससे इन्हें खेती के अलावा अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। इसकी अधिक जानकारी व प्रशिक्षण के लिए अपने जिले के कृषि विज्ञान केन्द्र में संपर्क कर सकते हैं। ■

मशरूम के बारे में कुछ दिलचस्प तथ्य

डा. योगेश गौतम
भाकृअनुप-खुम्ब अनुसंधान निदेशालय, चम्बाघाट, सोलन (हिमाचल प्रदेश)

मशरूम से संबंधित बहुत से ऐसे असामान्य और दिलचस्प तथ्य हैं, जिनसे कि आम आदमी अनभिज्ञ है। इनमें से कुछ तथ्य निम्नलिखित हैं:

- मशरूम में प्राकृतिक रूप से विटामिन 'डी' की मात्रा होती है। पराबैंगनी प्रकाश का प्रयोग विटामिन 'डी' को बढ़ावा देने के लिए किया जा सकता है।
- कई मशरूम सूरज निकलने के बाद प्रकाश की ओर बढ़ते हैं।
- मशरूम के बीजाणु काइटिन के बने होते हैं। काइटिन, पृथ्वी पर बहुत कम मात्रा में उपलब्ध पदार्थ है।
- मशरूम न केवल भोजन और दवा के रूप में उपयोगी होते हैं, बल्कि कुछ को जैविक उपचार में भी इस्तेमाल किया जा रहा है।
- मशरूम खाना मोटापा, मधुमेह और हृदय संबंधित कुछ जीवनशैली से जुड़ी स्वास्थ्य समस्याओं के जोखिम को कम कर देता है।
- यह हमलावर रोगाणुओं के खिलाफ प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है और प्रतिरक्षा प्रणाली को सुदृढ़ करता है।
- मशरूम में फाइबर, पोटेशियम, विटामिन सी, बी, बी2 (राइबोफ्लेविन), बी3 पाया जाता है।
- सेलेनियम, जो कि एंटी-कैंसर है, भी मशरूम में पाया जाता है।
- मशरूम में सोडियम और पोटेशियम का संतुलन रक्तचाप को संतुलित करने में मदद करता है।
- पारंपरिक चीनी चिकित्सा पद्धतियों में सदियों से मशरूम के औषधीय गुणों का उपयोग किया जा रहा है।
- मशरूम में लगभग 90 प्रतिशत पानी होता है।
- सिंथेटिक रंगों के आविष्कार से पहले मशरूम व्यापक रूप से ऊन और अन्य प्राकृतिक फाइबर रंगने के लिए इस्तेमाल किए जाते थे।
- मशरूम में एक केले की तुलना में अधिक पोटेशियम होता है।
- आधुनिक अध्ययनों से संकेत मिलता है कि मशरूम जीवाणु रोधी, सूजन रोधी और एंटी ऑक्सीडेंट है। यह रक्तचाप, रक्त शर्करा को कम करने, प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ाने, तनाव को कम करने और कैंसर से लड़ने में भी मदद करता है।

■

साभार : छत्रक पत्रिका

अनार में बहार नियमन से शुष्क क्षेत्रों में आय बढ़ाएं

रमेश कुमार, पी.एल. सरोज और **बी.डी. शर्मा**
भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर-334006 (राजस्थान)

अनार में बहार नियमन एक फायदेमंद पद्धति है। इसमें प्राकृतिक पुष्प एवं फल उत्पादन का कुशलतापूर्वक तरीके से प्रबंधन किया जाता है। इससे अच्छी गुणवत्तायुक्त और ज्यादा उपज मनचाहे समय में खेती के सीमित संसाधनों का दीर्घकालिक उपयोग करते हुए प्राप्त की जा सकती है। अनार के पुष्पन में पुष्प परिवर्तनकाल एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। यह वानस्पतिक ऊतक का जननीय ऊतक में विभेदन, पुष्पों की संख्या तथा उत्पादन दक्षता को निर्धारित करता है। अनार में तीन तरह के पुष्प यानी नर, उभयलिंगी तथा मध्यवर्ती, नई तथा पुरानी शाखाओं पर वर्ष में एक, दो या तीन बार आते हैं। यह जननद्रव्य, जलवायु तथा प्रबंधन कार्यप्रणाली पर निर्भर करता है। इससे निम्न गुणवत्तायुक्त कम उपज अलग-अलग समय में प्राप्त होती है। यह व्यावसायिक दृष्टि से लाभदायक नहीं है। इससे बचने के लिए अनार में बहार नियमन सिंचाई की उपलब्धता, कीट एवं रोग के प्रकोप तथा बाजार भाव को ध्यान में रखकर किया जाता है।

अनार (प्युनिका ग्रेनेटम) शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण बागवानी फसल है। यह स्वास्थ्य के लिए बहुत ही लाभदायक फल है। पोषक तत्वों कैल्शियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, लौह, जिंक तथा विटामिन, थायमिन, नायसिन तथा एस्कॉर्बिक अम्ल से भरपूर होने के अलावा यह रसीला तथा स्वादिष्ट फल होता है। यह एंटीऑक्सीडेंट्स जैसे एंथोसायनिन, पॉलीफिनॉल, सेलेनियम और आहार रेशों का सर्वोत्तम प्राकृतिक स्रोत माना जाता है। अनार के उच्च पोषक मूल्य, एंटीऑक्सीडेंट क्षमता, जैव सक्रिय यौगिक तथा रसायन निवारण गुणों के कारण इसे 'सुपर फूड' या 'औषधीय भोजन' कहा जाता है।

भारत में अनार की खेती महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान में की जाती है। वर्ष 2016-17 के दौरान भारत में अनार का कुल क्षेत्रफल लगभग 2.09 लाख हैक्टर तथा फल उत्पादन 24.42 लाख टन एवं उत्पादकता 11.70 टन प्रति हैक्टर थी। अनार में प्रतिकूल जलवायु, उच्च गर्मी, शुष्कता तथा लवणीय भूमि को सहने की अद्भुत क्षमता होती है। इसकी दृढ़ प्रकृति, कम लागत, लगातार उच्च उत्पादन, लंबी भंडारण अवधि तथा शुष्क वातावरण के दौरान प्रसुप्तता में जाने की क्षमता के कारण इसका क्षेत्रफल लगातार बढ़ रहा है। राजस्थान में अनार की खेती मुख्य रूप से जयपुर, अजमेर, अलवर, श्रीगंगानगर, पाली, कोटा, जालोर, बांसवाड़ा, सवाई माधोपुर, भीलवाड़ा, झुंझुनू, सिरोही, बीकानेर, बाड़मेर, जोधपुर एवं जैसलमेर जिलों में की जाती है। राजस्थान में अनार का क्षेत्रफल लगभग 12,000 हैक्टर तथा उत्पादकता 6.2 टन प्रति हैक्टर है।

बहार नियमन के सिद्धांत

अनार में बहार नियमन का मूल सिद्धांत प्राकृतिक फूलों और फलों के उत्पादन को वांछित मौसम में बदलाव करना है। यह संसाधनों के सर्वोत्तम एवं दीर्घकालिक उपयोग के साथ गुणवत्ता वाले फलों की उच्च पैदावार देता है। फूलों की शुरुआत अधिकतम प्रजनन की सफलता सुनिश्चित करती है। फूलों की शुरूआत व पुष्पन का नियंत्रण पर्यावरण और आनुवंशिक कारकों से प्रभावित एक महत्वपूर्ण विशेषता है। देश की गर्म शुष्क जलवायु के तहत महत्वपूर्ण जननद्रव्य/किस्मों की वृद्धि का प्रकार सारणी-1 में प्रस्तुत किया गया है। अनार शुष्क क्षेत्र में फरवरी से अक्टूबर

तक अनियमित रूप से फूलों का उत्पादन करता है। इससे गैर-तुल्यकालिक परिपक्वता के साथ निम्न गुणवत्ता वाली कम उपज प्राप्त होती है। इससे बचने के लिए अनार में बहार नियमन विशिष्ट समय पर फसल को प्रोत्साहित करने के लिए समन्वित कार्य प्रणाली की श्रृंखलाओं द्वारा किया जाता है। देश में उगाई जाने वाली इसकी सभी व्यावसायिक किस्में रोगों और कीटों, विशेष रूप से जीवाणु झुलसा, उकठा, निमेटोड, दीमक, माइट के प्रति बहुत संवेदनशील हैं। इसलिए अनार में बहार नियमन के लिए सिंचाई जल की उपलब्धता, जलवायु, कीट, रोग का प्रकोप और बाजार की मांग प्रमुख कारक हैं। इसमें गुणवत्तायुक्त ज्यादा उपज के लिए फूलों के विकास, परागण, फूलों के प्रकार, आकार, फूलों की परागण ग्रहणशीलता और दानों के विकास से संबंधित फल विशेषताओं सहित बहुत सी प्रमुख प्रजनन प्रक्रियाओं के समन्वयन की आवश्यकता होती है।

भारत में उगाई जाने वाली अधिकांश किस्में वर्षभर पुष्प उत्पादन की प्रकृति के कारण, अन्य देशों की किस्मों की अपेक्षा फायदेमंद होती हैं। इस पुष्प उत्पादन की प्रकृति की विशेषता का उपयोग करने के लिए अलग-अलग बहारों के फायदे और नुकसान (सारणी-2) को देखते हुए अनार में बहार नियमन किया जाता है।

बहार नियमन के तरीके

सिंचाई रोकना (नमी की कमी), पत्तियां गिराने वाले रसायन (डिफोलिएंट्स), पादप वृद्धि हार्मोनों, पोषक तत्वों की स्थिति और वितान प्रबंधन (सधाई, कटाई और छंटाई) इत्यादि प्रमुख बागवानी कार्य प्रबंधन हैं, जो कि पुष्पन को प्रभावित करते हैं। बहार नियमन करने के लिए अनार में एक-दो महीने पहले सिंचाई को रोक दिया जाता है। इसके बाद पौधों की हल्की छंटाई (प्रूनिंग) कर, डिफोलिएंट्स (इथ्रेल) का पर्णीय छिड़काव पत्तियां गिराने के लिए किया जाता है। उर्वरकों की सिफारिश के अनुसार

अनार में बहार नियमन से अधिक पुष्पन

सारणी 1. भारतीय शुष्क पारिस्थितिक तंत्र के तहत अनार जननद्रव्य/किस्मों की वृद्धि का प्रकार

वृद्धि का प्रकार	जननद्रव्य/किस्में
सदाबहार	ज्योति, जालौर सीडलेस, गणेश, बेदाना सूरी, पी-26, मृदुला, जी-137, जोधपुर रेड, काबुल, जीकेवीके-1, ढोलका, कोयम्बटूर व्हाइट, पी-23, यारकोड, मस्कट, पटना-5, ज्योति, भगवा, पीएयू सलेक्शन और रूबी
पर्णपाती	बेदाना, थिन स्किन, कुरवी-2, ईएल-24685, स्पीन दानेदार, बेसिन सीडलेस, काजकी अनार, खोग, एके अनार, बोचका लाइंस, गुल-ए-शाह, सिरीन अनार, डोरसाता मेलस, ताबेस्ट, काली सिरीन, तुजीत ईसी-10347, नाभा, नाना, कंधारी

बहार नियमन से अधिक फल उत्पादन

शुष्क क्षेत्रों के लिए प्रमुख किस्में

अनार की खेती के लिए उच्च गुणवत्ता वाली किस्मों का चयन जलवायु, मृदा, पानी तथा बाजार भाव के आधार पर करना चाहिए। शुष्क व अर्धशुष्क जलवायु के लिए जालौर सीडलेस, भगवा, जी-137, एवं मृदुला किस्में बहुत उपयुक्त पाई गई हैं।

जालौर सीडलेस–राजस्थान की लोकप्रिय किस्म

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

अनार में पुष्पन के दौरान उपयुक्त कार्बन-नाइट्रोजन अनुपात के प्रबंधन से अच्छा पुष्पन एवं फल उत्पादन होता है। एक वर्ष के पौधे को 10-15 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद, 200-250 ग्राम नाइट्रोजन, 125 ग्राम फॉस्फोरस और 100-125 ग्राम पोटेशियम देनी चाहिए। पौधे की आयु की दर से खाद एवं उर्वरक की मात्रा भी बढ़ाते रहना चाहिए। पांच वर्ष या इससे बड़े पौधों को 45 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद, 650 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस और 250 ग्राम पोटेशियम प्रति वर्ष देना चाहिए। इसके अलावा फूल आने पर एन:पी:के (12:61:00) 8 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर, फल बनते समय एन:पी:के (19:19:19) 8 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर तथा फल विकास के समय एन:पी:के (00:52:34) 2.5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर टपक सिंचाई पद्धति से एक महीने तक देना चाहिए। इसकी खेती के लिए सूक्ष्म पोषक तत्वों का बहुत ही महत्व है। इसके लिए जिंक सल्फेट (0.3 प्रतिशत), फेरस सल्फेट (0.4 प्रतिशत) तथा बोरेक्स (0.2 प्रतिशत) के घोल का पर्णीय छिड़काव फल बनने के एक महीने बाद करना चाहिए।

भगवा–भारत की प्रमुख किस्म

दानों की गुणवत्ता

हल्की सिंचाई की जाती है। इस उपचार से बेहतर पुष्पन, अच्छा पुष्प लिंग अनुपात, उच्च फल लगाव एवं ठहराव और अंतत: उच्च गुणवत्तायुक्त उपज वर्ष के विशेष मनचाहे समय में प्राप्त होती है। इस प्रकार विशिष्ट जीन और पर्यावरण परस्पर अंत:क्रिया से गुणवत्ता वाले फलों की संभावित उपज प्राप्त करने के लिए अनार में बहार नियमन बहुत आवश्यक है। बहार नियमन तीसरे वर्ष से शुरू किया जाता है और पहले दो वर्षों में पौधों की अच्छी वृद्धि और विकास के लिए फल नहीं लेने चाहिए।

अनार में निम्न तरीकों से बहार नियमन किया जाता है:

पानी की कमी के तनाव से पुष्पन

पौधे को आराम प्रदान करना सिंचाई रोकने का मुख्य सिद्धांत है। इसके परिणामस्वरूप आगामी मौसम में फूलों की संख्या तथा वृद्धि को बढ़ाने के लिए बड़ी मात्रा में भोजन जमा होता है। इस तरीके से पौधों में हल्की बालू वाली मृदा में एक महीने तथा दोमट मृदा में डेढ़ से दो महीने तक सिंचाई रोक दी जाती है। इससे 50 से 70 प्रतिशत पत्तियां गिर जाती हैं और जो बहार नियमन के लिए आदर्श अवस्था मानी जाती है। पानी की कमी से पौधों में ओस्मेटिन, प्रोलीन एवं आर्जिनिन प्रोटीन का उत्पादन होता है। यह फूलों के अंतर्रजातीय सिग्नल के रूप में कार्य करता है। यह कलिकाओं के वानस्पतिक एवं जननीय रूप में विभेदन को निर्धारित करता है। इससे पौधों में एक साथ अधिक पुष्पन, अच्छा लिंगानुपात और अधिक फल उत्पादन होता है।

अनार में बहुतनीय सधाई

रसायनों के उपयोग से पुष्पन

अनार में बहार नियमन के लिए इथ्रेल की उच्च सांद्रता (1-2 मि.ली. प्रति लीटर) का प्रयोग किया जाता है। इथ्रेल कोशिका भित्ति को गलाने वाले एंजाइम जैसे सेलूलोज और पोलिगलक्टरोनेज को सक्रिय करता है। इससे पौधों में 90 से 100 प्रतिशत पत्तियां गिर जाती हैं। यह बहार नियमन के लिए आदर्श अवस्था मानी जाती है। यह एक साथ अधिक पुष्पन, अच्छा लिंगानुपात और अधिक उपज प्राप्त करने में सहायक होती है।

बहार नियमन के लिए बागवानी कार्य

अनार में वितान प्रबंधन (सधाई, कटाई और छंटाई), पोषक तत्व प्रबंधन (कार्बन नाइट्रोजन अनुपात) से भी अच्छा पुष्पन एवं गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त की जा सकती है।

शुष्क क्षेत्रों में मृग बहार का नियमन किया जाता है। इसके लिए मई-जून में सिंचाई को रोककर, इथ्रेल 1 से 2 मि.ली. तथा 5 ग्राम डी.ए.पी. को मिलाकर पौधों में छिड़काव करें। अगस्त-सितंबर में पुष्पन करवाया जाता है। इससे फरवरी-मार्च में अच्छे गुणवत्तायुक्त फल प्राप्त किए जा सकते हैं। बहार नियमन के दौरान सिंचाई को रोकने के बाद हल्की छंटाई (बहार प्रूनिंग) करनी चाहिए। इससे पुष्पीय शाखाओं तथा उभयलिंगी पुष्पों की संख्या में वृद्धि होती है। इसके बाद हल्की सिंचाई करके खाद डालनी चाहिए। अच्छी गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त करने के लिए प्रत्येक पौधे में 60 से 80 फल लेने चाहिए।

बिना वितान प्रबंधन के साथ

अच्छे फल

सधाई एवं कांट-छांट

अनार में सधाई दो प्रकार से बहु तना पद्धति एवं एक तना पद्धति से की जा सकती है। शुष्क क्षेत्रों में 3-4 मुख्य तनों वाली सधाई करनी चाहिए। इससे दीमक या अन्य किसी कारणवश एक तना मर जाए तो अन्य तनों से उपज मिलती रहती है। इसमें 1-2 फीट ऊंचाई से द्वितीय शाखाओं को पनपने देना चाहिए। बहार नियमन के दौरान सिंचाई को

बहार नियमन (बहार ट्रीटमेंट)

अनार के पौधे में वर्षभर फूल आते रहते हैं। इनमें अंबे बहार (फरवरी-मार्च), मृग बहार (जून-जुलाई) एवं हस्त बहार (सितंबर-अक्टूबर) प्रमुख हैं। उत्पादन एवं गुणवत्ता की दृष्टि से किसी एक बहार का नियमन किया जाता है। बहार नियमन के लिए निम्नलिखित पहलुओं पर ध्यान देना आवश्यक है:

- पानी की उपलब्धता-वर्षा स्वरूप, सिंचाई उपलब्धता
- कीट और रोग का प्रकोप-जीवाणु, झुलसा, उकठा, निमेटोड, दीमक, माइट आदि
- बाजार की मांग-स्थानीय, दूरस्थ और निर्यात बाजार
- जननद्रव्य प्रकार-वृद्धि का प्रकार, पुष्पन और परिपक्वता अवधि
- कृषि-जलवायु परिस्थितियां-मृदा का प्रकार, शुष्क अवधि, निम्न और उच्च तापमान
- सिंचाई रोकने और रसायनों का पत्तियों के गिरने, नई शाखाओं के आने, पुष्प परिवर्तनकाल तथा पुष्पन पर प्रभाव
- विभिन्न मौसमों के दौरान लिंग अनुपात, उभयलिंगी फूलों की संख्या बढ़ाने के तरीके
- कटाई-छंटाई का नई शाखाओं के उत्पादन, फूलों की संख्या और लिंग अनुपात पर प्रभाव
- बहार नियमन का पौधों की वृद्धि और फल की गुणवत्ता पर प्रभाव
- पादप वृद्धि हार्मोनों और सूक्ष्म पोषक तत्वों का फल की गुणवत्ता पर प्रभाव
- पादप कार्यिकी विकार-फलों का फटना, दानों का भूरा होना और धूप में फलों की त्वचा के जलने का प्रबंधन
- दीर्घकालिक फल उत्पादन और बगीचे की उम्र

बहार नियमन के बिना रोगग्रसित एवं कमजोर तथा बहार नियमन के साथ स्वस्थ कार्यिकी विकार

सारणी 2. अनार में विभिन्न बहारों के फायदे और नुकसान।

बहार	फायदे	नुकसान
अंबे बहार (जनवरी-फरवरी)	• फलों का आकर्षक रंग • निर्यात के लिए उपयुक्त फल • कम कीट और बीमारी की आशंका	• अपेक्षित सिंचाई सुविधाओं की आवश्यकता • कम उत्पादन
मृग बहार (जून-जुलाई)	• ज्यादा सिंचाई की आवश्यकता नहीं • शुष्क क्षेत्र के लिए उपयुक्त • अनुकूल मौसम	• पुष्पन और फल उत्पादन वर्षा के मौसम के साथ मेल खाता है • जीवाणु झुलसा से प्रभावित क्षेत्रों में उपयुक्त नहीं
हस्त बहार (सितंबर-अक्टूबर)	• गहरे रंग के दानों के साथ आकर्षक फल • सीमित उपलब्धता के कारण उच्च मूल्य	• बरसात के मौसम में पानी को नहीं रोका जा सकता है • कम पुष्प और फल उत्पादन

अच्छे वितान प्रबंधन के साथ

रोकने के बाद हल्की छंटाई (बहार प्रूनिंग) द्वारा 20 सें.मी. नई वृद्धि को हटा देते हैं। फल की तुड़ाई के तुरंत बाद गहरी छंटाई करनी चाहिए। रोग संक्रमित एवं सूखी हुई सभी शाखाओं को काट देना चाहिए। छंटाई के बाद 10 प्रतिशत बोर्डो पेस्ट का कटे हुए भाग पर लेप करना चाहिए।

कीट एवं रोग प्रबंधन

बहार नियमन द्वारा रोगों एवं कीटों का अच्छे तरीके से प्रबंधन किया जा सकता है। बहार नियमन के दौरान डिफोलिएंट के उपयोग से 90 से 100 प्रतिशत तक पत्तियां गिर जाती हैं। इन्हें इकट्ठा कर जला देना चाहिए। इससे संभावित कीट एवं रोग पत्तियों के साथ नष्ट हो जाते हैं। इसके अलावा बहार नियमन से उपयुक्त समय पर पुष्पन करवाया जाता है जैसे जीवाणु झुलसा ग्रसित प्रदेशों में मृग की बजाय हस्त बहार का नियमन किया जाता है। इससे कीटनाशी का उपयोग भी कम हो जाता है।

कार्यिकी विकार

शुष्क क्षेत्रों में अनार में फलों का फटना, धूप में झुलसना तथा दानों का भूरा होना मुख्य कार्यिकी विकार हैं। इसमें बहार नियमन द्वारा उपयुक्त समय पर पुष्पन करवाकर, वितान एवं पोषक तत्व प्रबंधन से फलों को फटने तथा धूप में झुलसने से बचाया जा सकता है। फलों के फटने के प्रबंधन के लिए उपयुक्त बहार का चयन कर नियमित रूप से सिंचाई तथा जिब्रेलिक अम्ल (जी.ए.3) 20 पी.पी.एम. एवं बोरॉन 0.2 प्रतिशत का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। धूप में झुलसने से बचाने के लिए 35 प्रतिशत छाया वाली जाली से पौधों को अथवा फलों को बटर पेपर से ढक दें। दानों को भूरा होने से बचाने के लिए फलों

फल फटना

को पकने के बाद समय पर तोड़ लें।

इसमें बहार नियमन अधिक उपज, उच्च गुणवत्ता और उन्नत प्रबंधन के लिए एक प्रभावी और समग्र दृष्टिकोण है। बहार नियमन के लिए सिंचाई की उपलब्धता, कीट और रोग का प्रकोप, बाजार की मांग, जननद्रव्य का उपयोग और क्षेत्र विशेष की कृषि जलवायु प्रमुख कारक हैं। इसके संचालन के लिए गहन देखभाल और कार्यों की श्रृंखलाओं की आवश्यकता होती है। इसके अलावा बहार नियमन फल के फटने, धूप में झुलसने और दानों के भूरे होने जैसे कार्यिकी विकारों को कम करने में भी प्रभावी दृष्टिकोण है। इस तकनीक से पौधों के विकास, फलों की गुणवत्ता और उत्पादन पर बहुत से लाभदायक प्रभाव पड़ते हैं। ■

बहार नियमन से प्रभावित होने वाले पुष्पीय जैविक गुण

- **बहार का चयन:** अंबे, मृग और हस्त बहार में किसी एक बहार का चयन।
- **फूलों के आने का समय और अवधि:** 1-3 बार तथा कितने समय के लिए।
- **फूलों का प्रकार:** अनार में तीन तरह के नर, उभयलिंगी और मध्यवर्ती पुष्प आते हैं, जिनमें उभयलिंगी फूलों से फल प्राप्त होते हैं।
- **फूलों के आने की प्रकृति:** अनार में फूल नई और पुरानी शाखाओं दोनों पर आते हैं। बहार नियमन तथा अच्छे वितान प्रबंधन से पुष्पीय शाखाओं की संख्या में बढ़ोतरी की जा सकती है।
- **पुष्प लिंगानुपात:** बहार नियमन से उभयलिंगी फूलों की संख्या बढ़ाई जा सकती है।
- **परागण:** पुष्पन का समय कम या अधिक तापमान परागण को प्रभावित करता है, जिससे फल उत्पादन पर विपरीत असर होता है।
- **फलों का उत्पादन:** बहार नियमन फलों के गिरने को कम करके, फल उत्पादन को बढ़ावा देता है।
- **फलों का फटना:** बहार नियमन से साल में उपयुक्त समय पर पुष्पन करवाकर तथा पोषक तत्वों एवं नमी के प्रबंधन से फलों के फटने को कम किया जा सकता है।

फूलों के मुख्य कीट एवं उनका प्रबंधन

ऋतु जैन और **बबीता सिंह**
पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग, आईएआरआई, पूसा, नई दिल्ली-110012

फूलों का मानव जीवन से अति निकट का संबंध रहा है। सभी संस्कारों तथा उत्सवों में फूलों की उल्लेखनीय भूमिका रहती है। रंग-बिरंगे, सुगंधित पुष्प जीवन में सुखद वातावरण का निर्माण करके प्रेरणा, स्फूर्ति तथा सृजनात्मक प्रवृतियों का विकास करते हैं। पुष्प उत्पादन एक बहुत ही लाभकारी व्यवसाय है। पुष्प उत्पादन से प्रति क्षेत्र से दूसरी खाद्यान्न फसलों की अपेक्षा अधिक आय मिलती है। फूलों की खेती पर अनुसंधान के साथ-साथ आवश्यक सुविधाओं का विकास एवं तकनीकों का मानकीकरण हुआ है। इससे किसानों एवं उद्यमियों ने भी व्यापार के लिए फूलों की खेती को व्यवसाय के रूप में अपनाया है। सजावटी पौधों की मांग दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। गहन उत्पादन तकनीकों, नवीन प्रजातियों के उपयोग, फसल एकरूपता तथा एक ही फसल को कई वर्षों तक एक ही भूमि पर लगाने से कीट-पतंगों के प्रकोप को बढ़ावा मिलता है। व्यावसायिक तौर पर पुष्प उत्पादन करने के लिए कीटों तथा उनके लक्षणों एवं प्रबंधन की जानकारी आवश्यक है। इस संदर्भ में प्रमुख पुष्पीय फसलों के कीटों एवं प्रबंधन के बारे में जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

माहू

लाल मकड़ी कीट

भृंग

पुष्पीय फसलों को उगाने में अधिक देखभाल की आवश्यकता होती है। पुष्पीय फसलों में अधिक रोग पाए जाते हैं। इस कारण बाजार में फूलों का कम मूल्य प्राप्त होता है। इससे कृषक को आर्थिक हानि होती है। देश में पुष्प व्यवसाय एक उद्यम के रूप में विकसित हो रहा है। भारत में विभिन्न प्रकार की पुष्पीय फसलों को उगाया जाता है। राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कर्तित पुष्पों में गुलाब का प्रमुख स्थान है। गुलदाउदी एवं गेंदे की भी घरेलू बाजार में मुख्य भूमिका है। इसके साथ ही कंदीय पुष्पों में लिलियम, ग्लेडिओलस और रजनीगंधा का व्यावसायिक पुष्प उत्पादन अहम स्थान रखता है।

गुलाब के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

माहू

इस कीड़े का आक्रमण जनवरी-फरवरी में अधिक होता है। ये काले रंग में हरापन लिए नन्हें कीट होते हैं। इसके शिशु और वयस्क दोनों ही पौधों के मुलायम प्ररोह, कली और पुष्पों पर एकत्र होकर कोशिकाओं से रस चूसते हैं। फलस्वरूप कोमल कलियां गिरने लगती हैं और फूल अपना सौंदर्य खो देते हैं। इसके उपचार के लिए कीट दिखाई देते ही मैलाथियान अथवा रोगोर (1-2 मि.ली.) प्रति लीटर पानी में घोलकर 2 से 3 बार छिड़काव करें।

लाल मकड़ी कीट

यह गुलाब का बड़ा विनाशकारी कीट है। इसका प्रकोप अगस्त-सितंबर में होता है। यह पत्तियों के नीचे, फिर सारी पत्तियों एवं तने तथा अंततः पूरे पौधे पर जाल सा बना देता है। इस प्रकार फूल बेचने योग्य नहीं रहता। इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान (1 मि.ली. प्रति लीटर पानी) एवं पैराथियान (2.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी) के घोल का छिड़काव अप्रैल में तथा दूसरे घोल का छिड़काव अक्टूबर में करना चाहिए।

माहू

भृंग

अगस्त-सितंबर में इनका प्रकोप अधिक होता है। वयस्क भृंग रात में निकलकर पत्तियों को खाता है तथा तीव्र आक्रमण के समय पूरा पौधा पत्तीरहित हो जाता है। इसके नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफॉस 1 मि.ली. या डाईमेथोएट 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करना चाहिए।

गुलदाउदी के कीट एवं प्रबंधन

माहू

यह छोटे हरे-काले रंग के बिंदी जैसे कीट होते हैं। यह बड़ी संख्या में दिखाई देते हैं। ये कीट मुलायम भागों जैसे कली, छोटी पत्तियों और मुलायम तनों का रस चूस लेते हैं। प्रभावित फूल की कलियां खिलने से पहले ही सूख जाती हैं। यह कीट दिसंबर एवं फरवरी-मार्च में अधिक क्षति पहुंचाता है। इसकी रोकथाम के लिए 15 दिनों के अंतराल पर मोनोक्रोटोफॉस (1 मि.ली. प्रति लीटर पानी) या मैलाथियान (1 मि.ली. प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

माइट्स

ये बहुत ही छोटे बिंदु जैसे लाल रंग के कीट हैं, जो पत्तियों की निचली सतह पर मुख्यत: गर्मियों में दिखाई देते हैं। प्रभावित फूल की कलियां खिलने में असफल रहती हैं या खिलने से पहले ही सूख जाती हैं। 15 दिनों के अंतराल पर डाइकोफॉल (5 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी) या वर्टीमैक अथवा पैंटेक (5 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

माइट्स

पत्ती सुरंगक कीट

पत्ती सुरंग कीट

इसका प्रभाव मार्च और जून के दौरान होता है। यह कीट पॉलीहाउस में ज्यादा विनाशकारी होता है। इसके छोटे कीट डिम्भ पत्ती की निचली सतह और ऊपरी सतह के बीच सुरंग बना देते हैं। अत्यधिक प्रभाव के कारण पत्तियां सम्पूर्ण रूप से सूखकर गिर जाती हैं। प्रभावित पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए। प्रभावित पौधों पर मोनोक्रोटोफॉस एवं ट्राइजोफॉस (5 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

पत्ती मोड़क कीट

इसकी सभी इल्ली अवस्थाएं पौधे को प्रभावित करती हैं। रेशमी धागे की सहायता से इल्लियां पत्तियों को मोड़ देती हैं और पत्तियों को अंदर से खाना प्रारंभ कर देती हैं। इसके उपचार के लिए 15 दिनों के अंतराल पर

ग्लैडियोलस के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

माहू (एफिड): ये छोटे गोल आकार के कीट होते हैं। इनके शिशु व वयस्क दोनों ही पौधों की कोशिकाओं से रस चूसते हैं। इनका प्रकोप फरवरी-मार्च में ज्यादा होता है, जब मौसम हल्का गर्म होता है। इसके नियंत्रण के लिए मैलाथियन 50 ई.सी. या मेटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. (15 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

माहू

काष्ठ

काष्ठ (थ्रिप्स): ये ऊतकों को कुरेद या खरोंच देते हैं। इससे कोशिकाओं में घाव बन जाते हैं। इन घावों से निकले रस को ये चूसते हैं। इनके आक्रमण से पत्तियों तथा फूलों पर भूरे रंग के चकत्ते पड़ जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए मेटासिस्टॉक्स या रोगर 30 ई.सी. (2 मि.ली. प्रति लीटर पानी) पानी में घोलकर छिड़काव करें।

सूत्रकृमि (निमेटोड): सूत्रकृमि की विभिन्न प्रजातियां भी ग्लैडियोलस की फसल के लिए हानिकारक साबित हो सकती हैं। इनका प्रकोप मुख्य रूप से बलुई मृदा व गर्म जलवायु में अधिक पाया गया है। इनके प्रकोप से पौधों की जड़ों में गांठें बनने लगती हैं। नियंत्रण के लिए कंदों को 53^0 सेल्सियस तापमान पर 30 मिनट के लिए गर्म पानी में उपचारित करना चाहिए। थीमेट 4-10 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव इसके नियंत्रण में सहायक होता है।

रोयेंदार सूंडी

साइपर मैथ्रिन, डीकैम थ्रीन (2 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी) अथवा क्यूनॉलफॉस (5 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी) का छिड़काव करें।

गेंदे के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

लाल मकड़ी कीट

यह कीट पुष्पन के समय दिखाई देता है। पौधे पर धूल सी नजर आती है। मेटासिस्टाक्स (25 ई.सी.) या रोगोर या नुवान (40 ई.सी.) केराथेन 1 मि.ली./प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से इसे नियंत्रित किया जा सकता है।

रोयेंदार सूंडी

यह कीट पत्तियों को खा जाती है। इसे नुवान या थियोडॉन के एक मि.ली. प्रति लीटर पानी में डालकर छिड़काव करने से नियंत्रित किया जा सकता है।

लिलियम के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

चैंपा/माहू

चैंपा, लिली में पाए जाने वाला प्रमुख कीट हैं। विषाणुजनित रोग फैलाने में प्रमुख भूमिका निभाता है। इसके प्रभाव से पत्तियां मुड़ जाती हैं और ऊपर की पत्तियों के आकार में बदलाव आ जाता है। विभिन्न प्रकार के कीटनाशी जैसे-मैलाथियान,

चैंपा/माहू

लाल मकड़ी कीट

पैराथियान (2 मि.ली. प्रति लीटर पानी) का छिड़काव इनकी रोकथाम में सहायक होते हैं।

काष्ठ

माहू

लियोथ्रिप्स वेनेकी एवं *टेनियोथ्रिप्स सिम्पलैक्स* द्वारा होता है। यह लिली के कंदों को बहुत ही हानि पहुंचाता है। कंदों के शल्क पर भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। ये बाद में ढीले पड़कर कंद से टूटकर अलग हो जाते हैं। प्रभावित कंदों को रोपित करने पर उनकी वृद्धि नहीं होती है। इनकी रोकथाम के लिए कंदों में मैलाथियान (1 मि.ली. प्रति लीटर पानी) का छिड़काव उपयुक्त माना गया है। कंदों को 10^0 सेल्सियस के तापमान पर भंडारित करना चाहिए। इन कंदों पर मिथाइल ब्रोमाइड का छिड़काव या फिर कंदों को एक घंटे के लिए 43^0 सेल्सियस तापमान वाले पानी में उपचारित करना चाहिए।

सूत्रकृमि

कंदीय पुष्प होने के कारण इनमें सूत्रकृमि का भी प्रकोप पाया जाता है। इनके कारण पौधों की वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है। इनकी पत्तियों पर पीले रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए कंदों को फार्मालिन (2 प्रतिशत) के घोल में 43^0 सेल्सियस तापमान पर एक घंटे के लिए उपचारित करना चाहिए। प्रभावित कंदों से जड़ों को काटकर अलग कर देना चाहिए। इनकी रोकथाम के लिए सूत्रकृमिनाशी जैसे कि वैपाम, ऑक्सीमाइल, ग्रेन्यूल या मिथाइल ब्रोमाइड को प्रयोग में लाना चाहिए।

चमेली के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

कृमि कलिका

कृमि कलिका की सूंडी हरे रंग की तथा सिर काले रंग का होता है। यह अपरिपक्व कलिका तथा पुष्प को खाकर नष्ट कर देती है। इसका नियंत्रण मोनोक्रोटोफॉस (2 मि.ली./लीटर पानी) के छिड़काव द्वारा किया जा सकता है।

लाल मकड़ी

पत्ती सुरंगक कीट

रजनीगंधा के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

रजनीगंधा की फसल पर चैंपा (एफिड प्रजातियां), काष्ठ (थ्रिप्स सिम्पलैक्स) तथा सूंडी (हीलिओथिस आर्मीजिरा) कीटों का सर्वाधिक प्रकोप होता है। चैंपा और काष्ठ कीटों की रोकथाम करने के लिए फसल पर केलथिन (डाइकोफिल), डाइमेथोएट, (रोगोर) अथवा ऑक्सीडेमेटोन मिथाइल (मेटासिस्टॉक्स) कीटनाशियों का 1.5 से 2.0 मि.ली. प्रति लीटर की दर से पानी में घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करना चाहिए। सुंडियों को नियंत्रित करने के लिए फसल पर एंडोसल्फान (2 मि.ली./लीटर) अथवा मेथाइलपाराथिओन (1 मि.ली./लीटर) के घोल का छिड़काव करना लाभप्रद रहता है।

इस कीट का प्रकोप शुष्क तथा गर्म मौसम में बहुत अधिक होता है। लाल मकड़ी पत्तियों की निचली सतह को खाकर नुकसान पहुंचाती है। इससे पत्तियां पीली पड़कर टूटकर गिर जाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए थीमेट प्रभावी नियंत्रक है।

जरबेरा के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

पत्ती सुरग कीट

यह कीट पौधों की पत्तियों पर आड़ी-तिरछी सुरंगें बना देते हैं। इसकी वजह से पत्तियां हल्की पीली से भूरे रंग की हो जाती हैं। नियंत्रण के लिए प्रभावित पौधों को नष्ट कर देना चाहिए। साइपरमेथ्रीन (0.5-0.75 मि.ली. प्रति लीटर) या डाइक्लोवोस (0.5-1.8 मि.ली. प्रति लीटर) को पानी में मिलाकर छिड़काव किया जा सकता है।

माहू

हरे रंग के छोटे-छोटे कीट झुण्ड में नई शाखाओं व कलियों पर पाए जाते हैं। ये रस चूसकर पौधों को हानि पहुंचाते हैं। इनका नियंत्रण मेटासिस्टॉक्स (1 मि.ली. प्रति लीटर) तथा पैराथियान (2 मि.ली. प्रति लीटर) का छिड़काव करके किया जा सकता है।

माइट्स

ये छोटे-छोटे भूरे रंग के कीट होते हैं, जो प्रायः नंगी आंखों से दिखाई नहीं देते हैं। ये पत्तियों की निचली सतह पर रहते हैं। पत्तियों का रस चूसकर धब्बे जैसे बनाते हैं। अधिक माइट लगने पर पत्तियों पर जाला बनाते हैं। गर्म व सूखे स्थान पर इनका प्रभाव ज्यादा होता है। इनका नियंत्रण इंडोसल्फान (2.0 मि.ली./लीटर) या डाइकोफॉल (1.5 मि.ली. प्रति लीटर) के छिड़काव द्वारा किया जा सकता है।

माइटस

माहू

काष्ठ कीट

यह भूरे रंग के पंखों वाली चींटी की तरह दिखने वाला अति सूक्ष्म कीट है। ये कीट पौधों की मुलायम शाखाओं, पत्तियों तथा फूलों की कली का रस चूसते हैं। इससे मटमैले भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। इंडोसल्फान या डाइकोफॉल 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव कर थ्रिप्स पर नियंत्रण कर सकते हैं।

कारनेशन के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

लाल मकड़ी कीट

ये कीट पत्ती के निचले हिस्से को खाते हैं तथा रस चूसते हैं। इसके कारण पत्तियां पीली पड़ जाती हैं। इन पर जाल जैसी संरचना बन जाती है। माइट अधिकतर पौधे के निचले हिस्से पर आक्रमण करती है। गर्म दशा में ये कीट ज्यादा आक्रमण करते हैं। इनके नियंत्रण के लिए खरपतवार का पूर्ण नियंत्रण रखना चाहिए तथा रोकथाम के लिए क्लोरोफेनापाइरॉट 50-100 ग्राम प्रति हैक्टर की दर से देना चाहिए।

माहू

माहू या एफिड *(माईजस परसीकी)* कारनेशन के महत्वपूर्ण कीटों में से एक है। यह विषाणु रोगों के वाहक होते हैं। हरे रंग के छोटे-छोटे कीट झुंड में नई शाखाओं व कलियों पर पाए जाते हैं। ये रस चूसकर पौधे को हानि पहुंचाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए खरपतवार का पूर्ण नियंत्रण रखना चाहिए। क्षतिग्रस्त भाग को नष्ट कर देना चाहिए। दस दिनों के अंतराल पर रोगोर, मैलाथियान (2 मि.ली./लीटर) या नुवान (1.5 मि.ली. प्रति लीटर की दर से) का छिड़काव करना चाहिए। ■

चमत्कारी मुलहठी

मुलहठी विटामिन 'बी' व 'ई' का अच्छा स्त्रोत है। इसमें फॉस्फोरस, सिलिकॉन, जिंक, कैल्शियम, कोलन, आयरन, मैग्निशियम, पोटेशियम, और सिलेनियम जैसे तत्व होते हैं। इसकी जड़ आसानी से बाजार में अलग-अलग रूपों में उपलब्ध है। इसका उपयोग सूखी जड़, पाउडर या कैप्सूल के रूप में कर सकते हैं। इसे ज्यादातर टूथपेस्ट, मिठाई और पेय पदार्थों में इस्तेमाल किया जाता है। इसकी किस्मों में टिपिका, रेगेल व हर्ड मीठी होती है, जबकि ग्लाडूलिफेरा, वालडस्ट हल्की सी कड़वाहट लिए मीठी होती है।

इसका उद्‍गम उत्तर भारत, दक्षिणी यूरोप और पाकिस्तान में हुआ। इसको हिंदी में मुलहठी, संस्कृत व आयुर्वेदिक में यष्तिमधु भी कहा जाता है। भारत, पश्चिमी चीन, एशिया माइनर, स्पेन, इटली, फ्रांस, जर्मनी, ग्रीस, सीरिया, हंगरी आदि में इस औषधीय पौधे की कृषि की जाती है।

मुलहठी के औषधीय उपयोग

खांसी, ब्रोंकाईटिस, कब्ज, आंतों के अल्सर, गुर्दे, यकृत व फेफड़ों के रोगों तथा हाजमा ठीक करने व मनुष्य में वायरस व बैक्टीरिया को रोकने अथवा घाव को जल्दी भरने का गुण भी मुलहठी में है। इसके उपयोग से शरीर में सोडियम क्लोराइड तथा जल रोकने की शक्ति बढ़ती है। यह अंगों के फूलने व दर्द को रोकने में भी बहुत गुणकारी है। इसकी खेती पी-एच मान 6-8.2 वाली हल्की दोमट मृदा में की जाती है। इसकी खेती के लिए गर्म, शुष्क तथा उष्णकटिबंधीय जलवायु जिसमें भरपूर सर्दी का मौसम हो, इसके लिए अच्छा होता है।

मुलहठी के पौधे की ऊंचाई 1.2 मीटर तक होती है। इसको विभिन्न प्रकार के रोगों सरकोस्पोरालीफ, रूट-रॉट, कॉलररॉट, विल्टिंग, लीफ स्पॉट व दीमक आदि से बचाने के लिए अलग-अलग प्रकार के रसायनों का इस्तेमाल करना चाहिए। उत्तर भारत में नवम्बर या दिसम्बर में मुलहठी की खुदाई की जाती है। खुदाई के समय जड़ों में नमी 50-60 प्रतिशत होती है। धुलाई के बाद इसे 3 दिन धूप में फिर 10-12 दिन छाया में सुखाएं। बाद में इन्हें उचित आकार में काट कर पॉलीथीन के थैलों में भर लें। इसका मूल्य 120 रुपये प्रति किलोग्राम तथा पाउडर का मूल्य 125 रुपये प्रति किलोग्राम है। ■

पपीते से पपैन बनाएं

सरिता साहू, जे.पी. हरिनखेरे और **पुष्पलता तिर्की**
कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र, रायगढ़ (छत्तीसगढ़)

पपीता एक उष्णकटिबंधीय फल है। यह स्वादिष्ट, स्वास्थ्यवर्धक एवं पाचक भी है। कच्चा पपीता कृमिनाशक, प्लीहा वृद्धि और मोटापा कम करता है। इसमें 'पपैन' नामक एंजाइम पेट के रोगों में लाभदायक होता है। इसमें विटामिन 'ए' (2020 आईयू) प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। प्रति 100 ग्राम पपीते में लगभग 46 मि.ग्रा. विटामिन 'सी' भी पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें प्रोटीन, 0.1 प्रतिशत वसा, विटामिन 'बी', कार्बोहाइड्रेट्स एवं खनिज लवण जैसे लौह तत्व, फॉस्फोरस तथा कैल्शियम भी पाए जाते हैं। भारत में पपीते की खेती मुख्यत: आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ आदि प्रदेशों में की जाती है। देश में इसका क्षेत्रफल 1.33 लाख हैक्टर व उत्पादन 56.39 लाख टन है। कच्चे पपीते से एक दूध जैसा पदार्थ निकलता है, जिसका उपयोग पपैन बनाने में किया जाता है। पपैन का उपयोग दवाइयां बनाने, चमड़ा उद्योग, बीयर उद्योग, चॉकलेट, बिस्कुट एवं सौंदर्य प्रसाधनों में किया जाता है। पपैन के इसी व्यावसायिक महत्व के कारण आजकल पपीते की खेती फल प्राप्ति के अलावा पपैन उत्पादन के लिए भी की जा रही है।

पपीते के फलों से परिरक्षित उत्पाद जैम, जैली, टॉफी, मुरब्बा, टूटी-फ्रूटी आदि बनाए जाते हैं।

पौधा

पपीता एक शाकीय पौधा है और यह 3-5 मीटर ऊंचा होता है। इसका तना अंदर से खोखला और रेशेदार होता है। इसकी जड़ें अधिक गहराई में नहीं जाती हैं। इसका पौधा 3-4 वर्ष से ही अच्छी फलत देता है।

पपीते के पौधों को तीन श्रेणियों में बांटा गया है:

- **नर पौधे:** इसमें फल नहीं लगते हैं।
- **मादा पौधे:** इसमें फल लगते हैं।
- **उभयलिंगी पौधे:** इसमें फल लगते हैं।

फूल

पपीते में तीन प्रकार के फूल होते हैं। फूल का रंग सफेद होता है।

- **नर पुष्प:** ये फूल लंबे डंठलों में लगते हैं तथा नर पौधों में पाए जाते हैं। ये चमेली या रंजनीगंधा के फूलों से मिलते-जुलते हैं।
- **मादा पुष्प:** यह पुष्प मादा पौधे में पाया जाता है तथा फूल तने से लगे हुए निकलते हैं। ये आकार में बड़े तथा चोंगा की तरह होते हैं।
- **उभयलिंगी पुष्प:** उभयलिंगी पौधों में नर एवं मादा दोनों फूल होते हैं तथा फूल डंठल में लटके हुए गुच्छे के रूप में होते हैं।

नर पौधा

नर पुष्प

अत: पपीते के फूलों की पहचान कर नर पुष्पीय पौधों को उखाड़ देना चाहिए। लेकिन समुचित परागण के लिए कुल पौधों की संख्या का 10 प्रतिशत नर पौधों का होना आवश्यक है।

फल

पपीते का फल थोड़ा लंबा व गोलाकार होता है। कच्चे फलों का रंग हरा और पकने के बाद हरे-पीले रंग का होता है। गूदे का रंग पीला या लाल-नारंगी होता है। फलों का औसत वजन 300 ग्राम से लेकर 1000 ग्राम तक होता है।

बीज

पपीते के गूदे के बीच में काले रंग के लगभग 5 मि.मी. लंबे बीज होते हैं। ये पारदर्शी जिलेटेनियस एरिल से ढके रहते हैं।

पपीता लगाने का उचित समय

पपीता लगाने का सबसे अच्छा समय अक्टूबर-नवंबर होता है। इसके लिए अगस्त-सितंबर में बीज बोया जाता है। मानसून आने पर इसकी रोपाई की जाती है, ताकि अगले मानसून से पर्याप्त मात्रा में पपैन प्राप्त होने लगे।

बीज की मात्रा

प्रति हैक्टर पौध रोपण के लिए 400-500 ग्राम बीज आवश्यक होता है। पपीता परपरागित फसल होने के कारण इसके बीजों में विविधता होने की पूरी आशंका होती है। अत: बीज विश्वसनीय स्थान से खरीदने चाहिए। इसके पौधे तैयार करने के लिए तुरंत निकाले हुए बीज सुखाकार बोने चाहिए। इसके बीज की अंकुरण क्षमता 45 दिनों बाद कम

मादा पौधा

पपीते में पोषक तत्व

नमी	89.6 प्रतिशत
प्रोटीन	0.5 प्रतिशत
वसा	0.1 प्रतिशत
रेशा	0.8 प्रतिशत
कार्बोहाइड्रेट	9.5 प्रतिशत
कैल्शियम	0.1 प्रतिशत
फॉस्फोरस	0.1 प्रतिशत
कैलोरीफिक	40 आईयू/100 ग्राम में
विटामिन 'ए'	2020 आई यू/100 ग्राम में
विटामिन बी1	40 मि.ग्रा./100 ग्राम में
निकोटिन अम्ल	0.2 मि.ग्रा./100 ग्राम में
राइबोफ्लेविन	250 मि.ग्रा./100 ग्राम में
विटामिन 'सी'	46 मि.ग्रा./100 ग्राम में
आयरन	0.4 मि.ग्रा./100 ग्राम में

मादा पुष्प

होने लगती है। बीजों का अंकुरण बढ़ाने के लिए जिबरेलिक अम्ल 100-200 पीपीएम से उपचार करना चाहिए।

प्रवर्धन

पपीते के पौधे बीज द्वारा ही तैयार किए जाते हैं। बीज को पॉलीथीन की थैलियों में तैयार करना चाहिए। इसके लिए 200 गेज 20×15 सें.मी. आकार में थैलियों की जरूरत होती है। इन थैलियों में कील से नीचे और सामने में 10-12 छेद कर देते हैं। 2:1:1 के अनुपात में मृदा, गोबर की खाद व रेत का मिश्रण बनाकर थैलियों में भर देते हैं। प्रत्येक थैली में एक या दो बीज बो देते हैं। दो माह बाद जब पौधों में 4-5 पत्तियां निकलें और ऊंचाई 25 सें.मी. हो जाए तब थैली को फाड़कर खेत में प्रतिरोपित कर दिया जाता है।

गड्ढे की तैयारी तथा पौध रोपण

पपीता लगाने से पहले खेत को समतल कर लेना चाहिए, ताकि पानी न भर सके।

उभयलिंगी पौधा

इसके लिए 50×50×50 सें.मी. आकार के गड्ढे 2×2 मीटर की दूरी पर खोद लेने चाहिए। प्रत्येक गड्ढे में 10 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 500 ग्राम सुपर फॉस्फेट व 250 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश को मृदा के साथ अच्छी तरह मिलाकर गड्ढे को भर देना चाहिए। इसके बाद प्रत्येक गड्ढे में एक पौधा लगा देना चाहिए। पौधे लगाने से पहले पॉलीथीन को फाड़कर अलग कर देना चाहिए व मिट्टी समेत पौधे को गड्ढे में रोपित कर देना चाहिए। प्रायः सुबह या शाम के समय पौधे रोपित करने चाहिए। पौध रोपण के तुरंत बाद सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।

सिंचाई

पपीते की खेती में अधिक मात्रा में सिंचाई करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। सर्दियों में प्रत्येक 10 दिनों में एवं गर्मियों में 4 दिनों में हल्की सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाई पौधे के चारों ओर थाला बनाकर करनी चाहिए। इसके पौधे को एक बार में अधिक पानी नहीं देना चाहिए। साथ ही साथ जड़ों एवं तने के आसपास पानी अधिक समय तक नहीं ठहरना चाहिए, नहीं तो जड़ गलन रोग होने की आशंका रहती है।

उर्वरक

पपीते की अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए सही समय पर उर्वरकों की पर्याप्त मात्रा देनी चाहिए। रोपण के बाद प्रत्येक दो माह में प्रति पौधा 50 ग्राम यूरिया, 200 ग्राम सुपर फॉस्फेट एवं 100 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश देने से इसकी अच्छी फसल प्राप्त होती है। उर्वरक, तने से 10 इंच की दूरी पर 2-3 इंच गहरी मिट्टी खोदकर अच्छी तरह मिलाकर देना चाहिए। खाद देने के तुरंत बाद सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। नर पौधों में खाद देने की आवश्यकता नहीं होती।

निराई-गुड़ाई

पपीते के बगीचे को साफ-सुथरा रखना चाहिए। खरपतवार निरंतर निकालते रहना चाहिए। वर्षा ऋतु आने से पहले इसके तने पर एक फुट तक मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। यदि समय पर खरपतवार निकलती रहे तो फसल में काफी वृद्धि हो जाती है। रोगों एवं कीटों का प्रकोप भी कम रहता है।

विरलन

पपीते के पौधे में एक ही स्थान से अनेक फूल निकलते हैं। इनमें फल लगते है, अतः फल छोटे हो जाते हैं। इसलिए सघन स्थान से कुछ फूल तोड़ देने चाहिए। ऐसा करने से फलों का आकार बढ़ जाता है।

पपीते के प्रमुख रोग एवं उनकी रोकथाम

- **तना एवं जड़ गलन रोगः** इस रोग में पपीते के तने एवं जड़, जमीन से 3-4 इंच गहराई पर सड़कर गलने लगते हैं।

उभयलिंगी पुष्प

पपीते की मुख्य किस्में

पूसा डेलीशियस: यह अधिक उपज देने वाली पपीते की गाइनोडायसियस प्रजाति है। इसमें मादा तथा नर-मादा दो प्रकार के फूल एक पौधे पर आते हैं। फल मध्यम से बड़े (1-2 कि.ग्रा.) के गोल से अंडाकार होते हैं। गूदे की मोटाई 4 सें.मी., रंग गहरा नारंगी तथा कुल विलेय ठोस 10^0-13^0 ब्रिक्स होता है। पके फल का स्वाद मीठा तथा आकर्षक सुगंध लिए होता है। पौधे की औसत ऊंचाई 2-16 मीटर होती है।

पूसा मैजेस्टी: यह भी गाइनोडायसियस प्रजाति है। इसकी उत्पादकता तथा भंडारण क्षमता अधिक होती है। फल मध्यम से बड़े (1.5-2.5 कि.ग्रा.) अंडाकार होते हैं। गूदे की मोटाई 3.5 सें.मी. व कुल विलेय ठोस 9^0 ब्रिक्स होता है। यह किस्म रोग के प्रति सहनशील है। पौधे की औसत ऊंचाई 2 मीटर तक होती है।

पूसा जाइंट: यह भी डायसियस प्रजाति है। इसमें नर तथा मादा फूल अलग-अलग पौधे पर पाए जाते हैं। पौधे अधिक मजबूत होते हैं तथा तेज हवा से नहीं गिरते हैं। फल आकर्षक, बड़े आकार के (2.5-3.5 कि.ग्रा.) तथा अंडाकार होते हैं। गूदा नारंगी रंग का तथा कुल विलेय ठोस 7 से 8.5^0 ब्रिक्स होता है।

पूसा ड्वार्फ: यह छोटी बढ़वार वाली डायसियस किस्म है। इसमें नर तथा मादा फूल अलग-अलग पौधे पर आते हैं। फल मध्यम तथा अंडाकार होते हैं।

पूसा नन्हा: यह पपीते की डायसियस, म्यूटेंट ड्वार्फ किस्म है। यह पूसा डेलीशियस से विकिरण द्वारा विकसित की गई है। इस प्रजाति के पौधे बहुत छोटे होते हैं। पौधों की औसत ऊंचाई 130 सें.मी. होती है। फल मध्यम छोटे (1 से 1.2 कि.ग्रा.) अंडाकार होते हैं। गूदे की मोटाई 3.5 सें.मी., गहरा लाल से नारंगी रंग व कुल विलेय ठोस 6.5 से 8.0 डिग्री ब्रिक्स तक होता है। यह किस्म गृहवाटिका तथा सघन बागवानी के लिए उपयुक्त है।

वाशिंगटन: यह अधिक उपज देने वाली और विभिन्न जलवायु में उगाई जाने वाली प्रजाति है। पौधे की औसत ऊंचाई 2.50 मीटर होती है। इस पौधे की पत्तियों के डंठल बैंगनी रंग के होते हैं। फल गोलाकार या अंडाकार होता है। गूदा मीठा, पीला तथा अच्छी सुगंध वाला होता है। फलों का भार 800-900 ग्राम तक होता है।

कुर्ग हनीड्यू: पौधा मध्यम ऊंचाई (1.5-2 मीटर) का होता है। इस किस्म में जमीन से कम दूरी पर ही फल लगने आरंभ हो जाते हैं। फल लंबे, अत्यंत मीठे, अच्छी सुगंध वाले तथा कम बीज वाले होते हैं। यह गाइनोडायसियस किस्म है। फलों का भार 1.25 से 2.5 कि.ग्रा तक होता है।

सनराइज सोलो: यह किस्म 'लाइन-8-सोलो' और 'करिया सोलो' के क्रॉस के परिणाम से विकसित की गई है। इसके गूदे का रंग लाल, नारंगी तथा फलों का वजन 425 से 620 ग्राम तक होता है।

रेड लेडी 786: यह किस्म पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना द्वारा विकसित की गई है। यह संकर किस्म है, जिसमें नर व मादा फूल एक ही पौधे पर होते हैं। यह किस्म 9 महीने में तैयार हो जाती है। साथ ही साथ इसकी भंडारण क्षमता भी अधिक होती है। फलों का वजन 1-2 कि.ग्रा. तक रहता है एवं फल गोल से बेलनाकार होते हैं। गूदे का रंग लाल होता है। यह किस्म ताहवानी पपीता के नाम से प्रचलित है।

रांची: पौधे मध्यम ऊंचाई वाले किंतु अधिक फल देने वाले होते हैं। फल तने के निचले भाग में लगते हैं। फल अंडाकार, गूदा पीला तथा अत्यंत मीठा होता है।

सी.ओ-1: यह रांची पपीते की किस्म है। फल कम ऊंचाई पर लगते हैं। फसल एक समान तथा शीघ्र आती है। फल का भार 1.5 कि.ग्रा. तक होता है। पौधों की ऊंचाई 1.12 मीटर तक होती है।

सी.ओ.-2: यह अधिक पपैन देने वाली किस्म है। प्रत्येक फल से 4-6 ग्राम पपैन प्राप्त होता है। प्रति एकड़ 250-300 कि.ग्रा. पपैन प्राप्त होता है। यह खाने में भी अच्छी किस्म है। पौधे ओजस्वी और मध्यम लंबे होते हैं। फल मध्यम से बड़े (1-1.5 कि.ग्रा.) तथा अंडाकार होते हैं।

पंत पपीता-1: पौधा छोटा तथा डायसियस होता है। इसके फल मध्यम आकार के गोल होते हैं। फल मीठा तथा सुगंधित और गूदा पीला होता है। पौधों की ऊंचाई 125-135 सें.मी. तक होती है।

पंत पपीता-2: पौधों की ऊंचाई 150-220 सें.मी. तक होती है। फल मध्यम से बड़े आकार का (1-2 कि.ग्रा.) तथा अच्छी गुणवत्ता वाला होता है। इसकी उपज क्षमता 30-35 फल प्रति पौधा है। यह पाले के प्रति सहनशील किस्म है।

पंत पपीता-3: इस किस्म के पौधों की ऊंचाई 225-250 सें.मी. तक होती है। फल छोटे से मध्यम आकार (500-900 ग्राम) के होते हैं। प्रति पौधा फल की उपज 45-60 फल है। यह किस्म पाले के प्रति सहनशील है।

सी.ओ.-3: यह हाइब्रिड है, जो कि सी.ओ.-2 और सनराइज सोलो के क्रॉस से बना है। यह गाइनोडायसियस किस्म है। फल छोटे आकार के (450-600 ग्राम) होते हैं तथा गूदा गुलाबी रंग का होता है।

सी.ओ.-4: यह हाइब्रिड है, जो कि सी.ओ.-1 और वांशिगटन के क्रॉस से बना है। फल मध्यम आकार के गोलाकार होते हैं। फलों का औसत वजन 1.3-1.5 कि.ग्रा. तक होता है। गूदे का रंग पीला होता है।

सी.ओ.-5: यह डायसियस किस्म है। यह सबसे अधिक पपैन देता है। इससे 50-60 ग्राम पपैन प्रति फल प्राप्त होता है। प्रति पौधा 75-80 फल प्राप्त होते हैं। गूदे का रंग पीला होता है।

सी.ओ.-6: यह डायसियस किस्म है। फल बड़ा (1.5-2.0 कि.ग्रा.), गोल से अंडाकार तथा गूदा पीले रंग का होता है। प्रति पौधा 80-100 फल प्राप्त होते हैं।

सी.ओ.-7: यह गाइनोडायसियस किस्म है। फल का वजन एक कि.ग्रा. तक होता है। प्रति पौधा उपज 65-70 फल है।

जलवायु: पपीता उष्णकटिबंधीय जलवायु का फल है। इसके उत्पादन के लिए 22-26^0 सेल्सियस तापमान उचित होता है। तापमान 10^0 सेल्सियस से कम नहीं होना चाहिए, क्योंकि अधिक ठंड तथा पाला इसके लिए हानिकारक है।

मृदा: पपीते की खेती के लिए हल्की दोमट या दोमट मृदा, जिसमें जल निकास की सुविधा अच्छी हो, सर्वश्रेष्ठ होती है। पौधे की जड़ें गहराई तक नहीं जाती हैं। इसलिए इसकी खेती उथली भूमि पर भी की जा सकती है। मृदा का पी-एच मान 6.5-7.5 तक होना चाहिए।

फलों से लदा पेड़

पत्तियां पीली होकर गलने लगती हैं। इसकी रोकथाम के लिए जल निकास में सुधार करना चाहिए। ग्रसित पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए। गले हुए भाग पर 0.3 प्रतिशत (3 ग्राम प्रति लीटर पानी में) ब्लाटॉक्स का घोल बनाकर लगाना चाहिए।

- **डेम्पिंग ऑफ (आर्द्र गलन):** इसमें नर्सरी में ही छोटे पौधे नीचे से गलकर मर जाते हैं। इससे बचने के लिए बोने से पूर्व बीजों को कार्बण्डाजिम के 0.5 प्रतिशत के घोल (5 ग्राम प्रति लीटर पानी में) से उपचारित करना चाहिए। तथा मृदा की 2.5 प्रतिशत फार्मेल्डिहाइड घोल से उपचारित करना चाहिए।
- **पपीता मोजेक:** यह रोग विषाणु के कारण होता है। इस रोग में पत्ते पीले हो जाते हैं व डंठल छोटा, पत्तियां सिकुड़कर गोल होने लगती हैं। इस रोग से ग्रसित पौधे को उखाड़कर जला देना चाहिए। एफिड इस रोग का वाहक है। अत: 250 मि.ली. मेलाथियान 50 ई.सी. का 250 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

पर्ण कुंचन

- **पपीते का वलय चित्ती:** यह रोग एक विषाणु द्वारा होता है। पौधों में यह रोग किसी भी अवस्था पर लग सकता है। परंतु एक वर्ष पुराने पौधे पर रोग लगने की अधिक आशंका रहती है। रोग के लक्षण सबसे ऊपर की मुलायम पत्तियों पर दिखाई देते हैं। रोगी पत्तियां चितकबरी एवं आकार में छोटी हो जाती हैं। पर्णवृत एवं तनों पर गहरे रंग के धब्बे और लंबी धारियां दिखाई देती हैं। फलों पर गोल जलीय धब्बे बनते हैं। ये धब्बे फल पकने के समय भूरे रंग के हो जाते हैं। इस रोग के कारण रोगी पौधों में लैटेक्स तथा शर्करा की मात्रा स्वस्थ पौधों की अपेक्षा काफी कम हो जाती है।

पपीते के बीज

- **पर्ण चित्ती:** यह रोग सर्कोस्पोरा पपाई नामक कवक से होता है। पर्ण चित्ती के लक्षण पत्ती व फलों पर दिखाई देते हैं। दिसंबर-जनवरी में पत्तियों पर नियमित से अनियमित आकार के हल्के भूरे रंग के दाग उत्पन्न होते हैं। रोगी पत्तियां पीली पड़कर गिर जाती हैं। प्रारंभ में फलों पर सूक्ष्म आकार के भूरे से काले रंग के दाग बनते हैं। ये धीरे-धीरे बढ़कर लगभग 3 मि.मी. व्यास के हो जाते हैं। इस प्रकार फल खराब हो जाते हैं और फल बाजार के लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं। पकते हुए फलों पर रोग के लक्षण काफी स्पष्ट हो जाते हैं। रोगी पौधों के गिरे अवशेषों को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए। कवकनाशी दवा जैसे टॉप्सीन एम 0.1 प्रतिशत, मैंकोजेब, 0.2 से 0.25 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। यह छिड़काव 15-20 दिनों के अंतराल पर दोहरा देना चाहिए।

पपीते के फल

- **पर्ण कुंचन:** यह पपीते का एक गंभीर रोग है। इस रोग के कारण शुरू में पौधों का विकास रुक जाता है। प्रभावित पौधे में फूल एवं फल नहीं लगते हैं। रोगी पत्तियां छोटी एवं झुर्रीदार हो जाती हैं। पत्तियों का विकृत होना एवं इनकी शिराओं का रंग पीला पड़ जाना रोग के सामान्य लक्षण हैं। रोगी पत्तियां नीचे की तरफ मुड़ जाती हैं और फलस्वरूप ये उलटे प्याले के अनुरूप दिखाई पड़ती हैं। यह पर्ण कुंचन रोग का विशेष लक्षण है। पत्तियां मोटी, भंगुर और ऊपरी सतह पर अतिवृद्धि के कारण खुरदरी हो जाती हैं। प्रभावित पौधे में फूल एवं फल नहीं लगते हैं। इस रोग का फैलाव रोगवाहक सफेद

पपीते का वलय चित्ती

फल विकृति

मक्खी बेमिसिया टैबेकाई के द्वारा होता है। सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए डाइमेथोएट एक मि.ली./लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। रोगी पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए।

- **पपीते में फल विकृति:** यह विकृति फलन की प्रारंभिक अवस्था में ही शुरू हो जाती है। इनका विकराल रूप पकने की अवस्था और पेड़ की वयस्क अवस्था में एकाएक बढ़ जाता है। प्राय: सर्दियों में तापमान न्यूनतम होने पर इनका अधिक प्रकोप दिखाई देता है। विकृत फल विकार से निजात पाने के लिए 5 ग्राम बोरेक्स/पौधा पुष्पन एवं फलन के प्रारंभ होने पर देना अधिक लाभदायक है। शुरूआती दिनों में बोरॉन नहीं दे पाने पर फल विकास के समय 2.5 ग्राम/लीटर पानी में मिलाकर पत्तियों पर छिड़काव करना चाहिए।
- **चूर्णी फफूंद:** यह रोग ओडियम यूडिकम एवं ओडियम कैरिकी नामक कवक से होता है। इससे प्रभावित पत्तियों पर सफेद चूर्ण जैसा जमाव हो जाता है, जो बाद में सूख जाती हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (2 ग्राम प्रति लीटर पानी में) का छिड़काव करना चाहिए। रोगी पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए।

पपीता मोजेक

- **फल सड़न रोग:** यह पपीते के फल का प्रमुख रोग है। इसके कई कवक कारक हैं, जिसमें कोलेटोट्रोईकम ग्लियोस्पोराइड्स प्रमुख है। अधपके एवं पके फल रोगी होते हैं। इस रोग में फलों के ऊपर छोटे गोल धब्बे बनते हैं। बाद में ये बढ़कर आपस में मिल जाते हैं। इनका रंग भूरा या काला हो जाता है। यह रोग फल लगने से लेकर पकने तक लगता है। इसके कारण फल पकने से पहले ही गिर जाते हैं। कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.0 ग्राम/लीटर पानी में या मेन्कोजेब 2.5 ग्राम/लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से रोग में कमी आती है। बगीचे में जल निकास का उचित

फल सड़न रोग

प्रबंध होना चाहिए। रोगी पौधों को जड़ सहित उखाड़कर जला देना चाहिए और रोगी पौधों के स्थान पर दूसरे नए पौधे नहीं लगाने चाहिए।
- **श्यामव्रण:** यह रोग कवक कोलेटोट्राइकम ग्लोओस्पोरीआइडीज के कारण होता है। सामान्य रूप से इस रोग के लक्षण अधपके या पकते हुए फलों पर दिखाई पड़ते हैं। प्रारंभ में छोटे, गोल, जलीय तथा कुछ धंसे हुए धब्बों के रूप में उत्पन्न होते हैं। पकते हुए फलों की तुड़ाई बराबर होती रहती है। इससे पेड़ पर लगे फल पर बने धब्बों का आकार लगभग 2 सें.मी. तक होता है। फल पकने पर इन धब्बों का आकार भी बढ़ जाता है। कुछ समय बाद ये धब्बे आपस में मिल जाते हैं और इनका आकार अनियमित हो जाता है। रोगी पत्तियों को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए। कवकनाशी दवा का छिड़काव समयानुसार करना चाहिए।

पत्तियों में चूर्णी फफूंद

मैंकोजेब, 0.2 प्रतिशत, कार्बेन्डाजिम, 0.1 प्रतिशत, डैकोनिल 0.2 प्रतिशत या बोर्डो मिश्रण (2:2:50) कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए। पहला छिड़काव फल लगने के एक माह बाद करना चाहिए तथा उसके बाद 15 से 20 दिनों के अंतर पर कुल 5-6 छिड़काव करने चाहिए।

पपीते के प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

लाल मकड़ी

इस कीट का प्रकोप पत्तियों व फलों की सतह पर होता है। इसके प्रकोप के कारण पत्तियां पीली पड़ जाती हैं। बाद में ये लाल, भूरे रंग की हो जाती हैं। इसके नियंत्रण के लिए नुवाक्रॉन 0.3 प्रतिशत (एक ग्राम प्रति लीटर पानी में) घोल का छिड़काव करें। थायोडान एवं डायथेन एम 45 (1.5 मि.ली./लीटर पानी में) घोल का भी छिड़काव कर कीट नियंत्रण किया जा सकता है।

एफिड

ये कीट पौधे के सभी हिस्सों से रस चूसते हैं और विषाणु रोग को फैलाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 18.5 एस एल (0.25 मि.ली. प्रति लीटर पानी में)

पर्ण चित्ती

तना एवं जड़ गलन रोग

घोल बनाकर छिड़काव करें। थाईमेक्साजेम एक मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

फलबेधक मक्खियां

यह पपीते का एक मामूली कीट है। कच्चे व अधपके फलों में इसका प्रकोप नहीं होता। केवल पके हुए फलों को ही इससे नुकसान पहुंचता है। इस कीड़े के मैगट ही नुकसान पहुंचाते हैं। मादा पके हुए फलों के अंदर उनके छिलके के नीचे अंडे देती हैं। ये अंडे 2 से 3 दिनों में फूट जाते हैं। उनसे निकले मैगट फलों के गूदे को खाकर उन्हें बेकार कर देते हैं। वयस्क मक्खी को चारा प्रलोभन (कार्बोरिल 4 ग्राम प्रति लीटर पानी में 0.1 प्रतिशत प्रोटीन हाइड्रोजाइलेट या शीरे के घोल का छिड़काव) से आकर्षित करके मारा जा सकता है। मिथाइल यूजिनोल 0.1 प्रतिशत, मैलाथियान 0.1 प्रतिशत व एल्कोहल से बने ट्रैप को बागों में पेड़ पर लटकाएं ताकि नर मक्खी ट्रैप में आकर्षित होकर मर जाए।

फलों की तुड़ाई एवं उपज

पौध रोपण के 9-10 माह से फल पकना आरंभ हो जाते हैं। परिपक्व होने पर फल में पीली धारियां दिखाई देती हैं। पपीता के परिपक्व फलों को सावधानीपूर्वक तोड़कर

पपीते में फल

संग्रहित किया जाता है। पपीते के एक पौधे से लगभग 30-50 फल प्राप्त होते हैं। डायसियस किस्मों से 40-50 टन प्रति हैक्टर प्रथम वर्ष एवं 20-25 टन दूसरे वर्ष तथा संकर किस्मों से लगभग 70-80 टन तक उपज ली जा सकती है।

तुराई उपरांत देखभाल

फलों को जब दूरस्थ बाजारों में विक्रय के लिए भेजना हो तो अधपके फलों को अखबार के पन्नों में लपेटकर पुआल से ढककर बांस की टोकरी या लकड़ी के कार्टून में भरकर भेजना चाहिए। स्थानीय बाजारों के लिए भी फलों को पुआल या ढककर भेजना चाहिए, ताकि फलों की गुणवत्ता बनी रहे।

पपीते से पपैन उत्पादन

कच्चे किंतु पूर्ण विकसित फलों में चीरा लगाने पर दूध निकलता है। इसमें पपैन एंजाइम होता है। फलों के पकने के एक माह पहले दूध निकलना प्रारंभ हो जाता है।

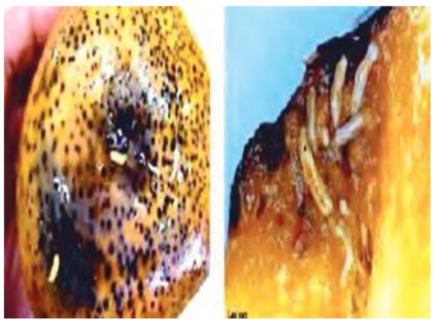

फलबेधक मक्खियों से प्रभावित फल

प्राय: पपीते की खेती फलों के उत्पादन के लिए की जाती है। पपीते की खेती फलों को बेचने के साथ-साथ पपैन उत्पादन के लिए भी की जाए तो काफी लाभप्रद है। पपैन से बहुमूल्य औषधियां तैयार की जाती हैं। इसे अजीर्ण, डिप्थीरिया तथा खूनी बवासीर आदि रोगों के लिए उपयोग किया जा सकता है। यह यकृत, हृदय, मूत्र और चर्म रोगों में लाभकारी पाया गया है। अनेक औद्योगिक उत्पादन में भी इसका उपयोग किया जाता है। जैसे-च्यूइंगम बनाने, चर्म संसाधन, मांस को मुलायम करने, दूध को जमाने, बीयर तैयार करने आदि। सौन्दर्य प्रसाधन जैसे-क्रीम, स्नो, दांतों के पेस्ट आदि तैयार करने के लिए भी यह उपयोग में आता है।

पपैन तैयार करने की विधि

पपैन उत्पादन के लिए जब फल सेब से बड़े हो जाएं या 2.5 से 3 माह के हो जाएं तब वे पपैन निकालने योग्य हो जाते हैं। वर्षा आरंभ से लेकर नवंबर तक इन फलों से पपैन निकाला जा सकता है। सुबह से लेकर ग्यारह बजे तक फलों से दूध का प्रवाह

श्यामव्रण रोग

तीव्र गति से होता है। इसलिए यही समय दूध निकालने के लिए उचित होता है। फलों में खरोंच लगाने के लिए रेजर, ब्लेड, स्टेनलेस स्टील का चाकू या बांस की बारीक खपच्ची अथवा कांच के टुकड़े का उपयोग किया जा सकता है। इसके बाद फलों में 0.3 सें.मी. गहरे चार बार लंबाई में चीरे लगाने चाहिए। दूध निकलने पर उसे कांच, चीनी मिट्टी या एल्युमिनियम के बर्तन में इकट्ठा करना चाहिए। यह क्रिया 3-4 दिनों के अंतर पर 4-5 बार दोहरानी चाहिए। इस प्रकार 15-20 दिनों में फलों से दूध निकल आता है। दूध दस्ताने पहनकर निकालना चाहिए। सामान्यत: एक व्यक्ति 10-12 घंटे काम करके 500 ग्राम पपैन निकाल सकता है। दूध को धूप में सुखा लें अथवा उच्च ताप पर शोषक या भट्टी में 24 घंटे तक सुखाएं। दूध सूख जाने पर बेलन से पीसकर चूर्ण बना लेना चाहिए। दूध को सुखाने से पहले उसमें 0.5 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाइसल्फाहट मिला देना चाहिए। इससे यह खराब नहीं होता है। इसे पॉलीथीन की थैलियों अथवा बोतलों में भर दिया जाता है। पपैन का उत्पादन बढ़ाने के लिए कुछ वृद्धि नियामक का उपयोग किया जा सकता है। इससे फलों की गुणवत्ता भी बढ़ती है। 2,4-डी (10 पीपीएम), 2,4,5,-टी (25 पीपीएम), एनएए (50 पीपीएम) या जिबेरेलिक एसिड (10 पीपीएम) का घोल पौधों में फूल खिलने के बाद छिड़कना चाहिए।

पपैन उत्पादन

- प्रतिफल: 3-10 ग्राम
- प्रति पौधा: 200-450 ग्राम
- प्रति हैक्टर: 5-8 क्विंटल

कच्चे फलों से दूध के रूप में पपैन निकाल लेने से फलों के गुण, स्वाद तथा पोषक तत्वों में कोई कमी नहीं आती है। फलों में खरोंच होने से उनके विक्रय मूल्य में अंतर अवश्य आता है। इसके बावजूद फल आसानी से बाजार में बिक जाता है। इस तरह पपैन तैयार कर पपीता उद्यान से अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है।

बेर से बैर कैसा?

एस.एस. शर्मा, आर.पी. शर्मा*, एस.एस. राव* और **ए.आर.के. पठान**
मृदा एवं कृषि रसायन विभाग
राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, (एस.के.एन. कृषि विश्वविद्यालय) दुर्गापुरा, जयपुर (राजस्थान)

गरीबों का मेवा कहा जाने वाला बेर भारत व चीन का प्राचीन लोकप्रिय फल है। इसका कुल रैमनैसी है तथा जिजीफस जीन्स (वंश) है। इस फल की उत्पत्ति संभवतः दक्षिणी चीन, भारत व मलाया में हुई। इस जीन्स के अंतर्गत लगभग 50 प्रजातियां (स्पीसीज) हैं, जिनमें लगभग 18-20 प्रजातियां हमारे देश में पाई जाती हैं। व्यावसायिक दृष्टि से कुछ ही प्रजातियां उपयोगी हैं। हमारे देश में व्यावसायिक दृष्टि से बागवानी के लिए जिजीफस मोरीशियाना तथा चीन में जिजीफस जुजुबा का उपयोग किया जाता है। बेर की खेती देश के सभी प्रांतों में कुछ क्षेत्रों में होती है। मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र व आंध्र प्रदेश में अपेक्षाकृत अधिक खेती होती है। इस समय हमारे देश में इसकी खेती अनुमानतः 22,000 हैक्टर (2010-2011) से बढ़कर, 50,000 हैक्टर (2016-17) क्षेत्र में हो रही है। इसके अतिरिक्त प्रतिवर्ष विशेषकर बंजर भूमि में व्यावसायिक खेती बढ़ रही है।

राजस्थान में बेर का क्षेत्रफल, देश के कुल क्षेत्रफल का 1.39 प्रतिशत, उत्पादन का 0.88 प्रतिशत एवं उपज का 63 प्रतिशत है।

उपयोग

बेर के पके फल ताजे ही खाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त पके फलों को सुखाकर छुआरा, कैन्डी व शीतल पेय के रूप में उपयोग किया जाता है। पके फल में विटामिन ए, बी, सी तथा शर्करा के अतिरिक्त खनिज पदार्थ, कैल्शियम, मैग्नीशियम व जस्ता प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यह एक बहुवर्षीय व बहुपयोगी फलदार पेड़ है। इसमें फलों के अतिरिक्त पेड़ के अन्य भागों का भी आर्थिक महत्व है। इसकी पत्तियां पशुओं के लिए पौष्टिक चारा प्रदान करती हैं। इसमें प्रतिवर्ष अनिवार्य रूप से की जाने वाली कटाई-छंटाई से प्राप्त कांटेदार झाड़ियां खेतों व ढाणियों की रक्षात्मक बाड़ बनाने व भंडारित चारे की सुरक्षा के लिए उपयोगी होती हैं। शुष्क क्षेत्रों में विशेष रूप से राजस्थान में अल्प, अनियमित व अनिश्चित वर्षा को देखते हुए बेर की खेती बहुत उपयोगी है। पौधे एक बार स्थापित होने के बाद वर्ष के किसी भी समय होने वाली वर्षा का समुचित उपयोग कर आवश्यक बढ़वार कर लेते हैं।

औषधीय महत्व

बेर के फल, पत्तियों, वृक्ष की छाल, गोंद इत्यादि में औषधीय गुण पाए जाते

*भाकृअनुप-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपुर (महाराष्ट्र)

हैं। बेर की पत्तियां गायों तथा बकरियों के लिए एक उत्कृष्ट आहार का कार्य करती हैं। इन पत्तियों में कैल्शियम, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम, पोटेशियम, सोडियम, क्लोरीन, गंधक इत्यादि तत्व प्रचुर मात्रा में होते हैं। राजस्थान के आदिवासी क्षेत्रों में जब बेर पकने लगते हैं, तो उन्हें सुखा लिया जाता है। यही सूखे बेर, वर्ष भर, कुछ समय पानी में भिगोकर, गीले हो जाने पर स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ के रूप में काम में लिए जाते हैं। विटामिन 'सी' तथा शर्करा का भी बेर में खजाना होता है। छाल का उपयोग अतिसार एवं दस्त में किया जाता है। मितली, उल्टी तथा गर्भावस्था में होने वाले पेट-दर्द को रोकने के लिए बेर का उपयोग किया जाता है।

बेर उत्पादन की उन्नत विधि

जलवायु एवं भूमि

बेर की खेती उष्ण व उपोष्ण जलवायु में आसानी से की जा सकती है। इसमें कम पानी व सूखे से लड़ने की विशेष क्षमता होती है। बेर में वानस्पतिक बढ़वार वर्षा ऋतु के दौरान व फूल वर्षा ऋतु के आखिर में आते हैं। फल वर्षा की भूमिगत नमी के कम होने तथा तापमान बढ़ने से पहले ही पक जाते हैं। गर्मियों में पौधे सुषुप्तावस्था में प्रवेश कर जाते हैं। पत्तियां अपने आप ही झड़ जाती हैं। इस समय पानी की आवश्यकता नहीं के बराबर होती है। इस तरह बेर अधिक तापमान तो सहन कर लेता है, लेकिन शीत ऋतु में पड़ने वाले पाले के प्रति अति संवेदनशील होता है। अतः ऐसे क्षेत्रों में जहां नियमित रूप से पाला पड़ने की आशंका रहती है, इसकी खेती नहीं करनी चाहिए। जहां तक मृदा का सवाल है बलुई दोमट मृदा, जिसमें जीवांश की मात्रा अधिक हो, इसके लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। बलुई मृदा में भी समुचित मात्रा में देसी खाद का उपयोग करके इसकी खेती की जा सकती है। हल्की क्षारीय व हल्की लवणीय भूमि में भी इसकी उपज ली जा सकती है।

राजस्थान में सारणी-2 के अनुसार 10.5 प्रतिशत क्षेत्र को छोड़कर सभी मृदाओं में बेर की खेती की जा सकती है। साथ ही बेर की खेती सामान्यतः सभी प्रकार की मृदा संरचनाओं में की जा सकती है।

उन्नत किस्में

बेर की 300 से भी अधिक किस्में विकसित की जा चुकी हैं। सभी किस्में बारानी क्षेत्रों में विशेषकर कम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नहीं है। ऐसे क्षेत्रों के लिए अगेती व मध्यम अवधि में पकने वाली किस्में ज्यादा उपयुक्त पाई गई हैं। काजरी में पिछले तीस वर्षों के अनुसंधान के आधार पर किस्मों के पकने के समय के अनुसार इनका वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है:

प्रमुख कीट एवं व्याधियां

फल मक्खी

यह कीट बेर को सबसे अधिक नुकसान पहुंचाता है। इस मक्खी की वयस्क मादा फलों के लगने के तुरंत बाद उनमें अंडे देती है। ये अंडे लार्वा में बदलकर फल को अंदर से नुकसान पहुंचाते हैं। इसके आक्रमण से फलों की गुठली के चारों ओर एक खाली स्थान हो जाता है तथा लट अंदर से फल खाने के बाद बाहर आ जाती है। इसके बाद यह मृदा में प्यूपा के रूप में छिपी रहती है तथा कुछ दिन बाद वयस्क बनकर पुनः फलों पर अंडे देती है। इसकी रोकथाम एवं नियंत्रण के लिए मई-जून में बाग की मिट्टी पलटें। फल लगने के बाद जब अधिकांश फल मटर के दाने के साइज के हो जाएं, उस समय क्यूनालफॉस 25 ईसी एक मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 20-25 दिनों बाद करें।

छालभक्षी कीट

यह कीट नई शाखाओं के जोड़ पर छाल के अंदर घुसकर जोड़ को कमजोर कर देता है। फलस्वरूप वह शाखा टूट जाती है, जिससे उस शाखा पर लगे फलों का सीधा नुकसान होता है। इसकी रोकथाम के लिए खेत को साफ-सुथरा रखें। गर्मी में पेड़ों के बीच में गहरी जुताई करें। जुलाई-अगस्त में डाइक्लोरवास 76 ईसी 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर नई शाखाओं के जोड़ों पर दो-तीन बार छिड़काव करें।

चेफर बीटल

इसका प्रकोप जून-जुलाई में अधिक होता है। यह पेड़ों की नई पत्तियों एवं प्ररोहों को नुकसान पहुंचाता है। इससे पत्तियों में छिद्र हो जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए पहली वर्षा के तुरंत बाद क्यूनालफॉस 25 ईसी 2 मि.ली. या कार्बोरिल 50 डब्ल्यूपी 4 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

छाछ्या (पाउडरी मिल्ड्यू या चूर्णी फफूंद)

इस रोग का प्रकोप वर्षा ऋतु के बाद अक्टूबर-नवंबर में दिखाई पड़ता है। इससे बेर की पत्तियों, टहनियों व फूलों पर सफेद पाउडर जमा हो जाता है। प्रभावित भागों की बढ़वार रुक जाती है और फल व पत्तियां गिर जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए केराथेन एल.सी. एक मि.ली. या घुलनशील गंधक 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। 15 दिनों के अंतर पर दो-तीन छिड़काव पूर्ण सुरक्षा के लिए आवश्यक होते हैं।

सूटीमोल्ड

इस रोग से ग्रसित पत्तियों के नीचे की सतह पर काले धब्बे दिखाई देते हैं। ये बाद में पूरी सतह पर फैल जाते हैं और रोगी पत्तियां गिर जाती हैं। नियंत्रण के लिए रोग के लक्षण दिखाई देते ही मैन्कोजेब 3 ग्राम या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

पत्ती धब्बा/झुलसा रोग

इस रोग के लक्षण नवंबर में शुरू होते हैं। यह आल्टरनेरिया नामक फफूंद के आक्रमण से होता है। रोगग्रस्त पत्तियों पर छोटे-छोटे भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। बाद में ये धब्बे गहरे भूरे रंग के तथा आकार में बढ़कर पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं। इससे पत्तियां सूखकर गिरने लगती हैं। नियंत्रण के लिए रोग दिखाई देते ही मेन्कोजेब 3 ग्राम या थायोफिनेट मिथाइल एक ग्राम दवा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिनों के अंतर पर 2-3 छिड़काव करें।

अगेती किस्में: गोला, काजरी गोला। इनके फल दिसंबर के अंतिम सप्ताह में पकने शुरू होते हैं तथा जनवरी तक उपलब्ध रहते हैं।

मध्यम किस्में: सेब, कैथली, छुहारा, दंडन, सेन्यूर-5, मुंडिया, गोमा कीर्ति इत्यादि। इनके फल मध्य जनवरी से मध्य फरवरी तक उपलब्ध रहते हैं।

पछेती किस्में: उमरान, काठा, टीकड़ी, इलायची। इन किस्मों के फल फरवरी-मार्च तक उपलब्ध रहते हैं।

सारणी 1. बेर में पोषक तत्व

क्र. सं	नाम	मात्रा
1.	घुलनशील ठोस पदार्थ	13-20 प्रतिशत
2.	अम्लता	0.2-0.8 प्रतिशत
3.	एस्कोर्बिक एसिड (विटामिन 'सी')	70-165 मि.ग्रा./100 ग्राम पल्प
4.	विटामिन 'ए' (बीटा-केरोटेन)	80 आईयू/100 ग्राम
3.	प्रोटीन	0.9 प्रतिशत
4.	कार्बोहाइड्रेट	12.8 प्रतिशत
5.	रिड्यूसिंग शर्करा	3.1 प्रतिशत
6.	कुल शर्करा	10.0 प्रतिशत

सारणी 2. राजस्थान में मृदा की गहराई

श्रेणी	गहरी (सें.मी.)	क्षेत्र ('000 हैक्टर	टीजीए का प्रतिशत
अत्यधिक छिछली	10-25	1151.0	3.4
छिछली	25-50	2445.3	7.1
मध्यम छिछली	50-75	5229.6	15.3
मध्यम गहरी	75-100	3561.8	10.4
गहरी	100-150	10856.5	31.7
अत्यधिक गहरी	>150	9212.6	26.9

बगीचे की स्थापना

सबसे पहले बगीचे के लिए चयनित खेत में से जंगली झाड़ियों इत्यादि हटाकर उसके चारों ओर कांटेदार झाड़ियों या कंटीली तार से बाड़ बनाएं, ताकि नीलगाय व अन्य जानवरों से पौधों को बचाया जा सके। खेत की तैयारी मई-जून में 6-7 मीटर की दूरी पर वर्गाकार विधि से रेखांकन करके 2' × 2' × 2' आकार के गड्ढे खोदने के साथ शुरू करें। इनको कुछ दिन धूप में खुला छोड़ने के बाद ऊपरी मृदा में 20-25 कि.ग्रा. देसी खाद व 10 ग्राम फिपरोनिल (0.03 प्रतिशत ग्रेन्यूल) प्रति गड्ढा मिलाकर भराई करके मध्य बिंदु पर एक खूंटी गाड़ दें। इसके उपरांत पहली वर्षा से जुलाई में जब गड्ढों की मृदा जम जाए तो इसमें पहले से कलिकायन किए पौधों को प्रतिरोपित करें। प्रत्यारोपण करने के लिए पॉलीथीन की थैली को एक तरफ से ब्लेड से काटकर जड़ों वाली मृदा को यथावत रखते हुए पॉलीथीन को अलग करें तथा पौधों को मृदा के साथ गड्ढों के मध्य बिंदु पर स्थापित करके पौधों के चारों तरफ की मृदा अच्छी तरह दबाकर तुरंत सिंचाई करें। अगले दिन करीब दस लीटर पानी प्रति पौधा फिर से दें। इसके बाद वर्षा की स्थिति को देखते हुए जरूरत के अनुसार 5-7 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहें। सर्दी के मौसम तक पौधे यथावत स्थापित हो जाते हैं। 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें। गर्मी के मौसम में रोपाई के पहले वर्ष में एक सप्ताह के अंतर पर सिंचाई करें।

अंतरासस्य

शुरू में तीन वर्ष तक पौधों की कतारों के बीच में कुष्माण्ड कुल की सब्जियों के अलावा मटर, मिर्च, चौलाई, बैंगन इत्यादि लगा सकते हैं। बारानी क्षेत्रों में मोठ, मूंग व ग्वार की खेती काफी लाभदायक रहती है।

कटाई-छंटाई

बेर में कटाई-छंटाई का कार्य बहुत महत्वपूर्ण होता है। प्रारंभिक वर्षों में मूलवृन्त से निकलने वाली शाखाओं को समय-समय पर काटते रहें। इससे कलिकायन किए हुए ऊपरी भाग की उचित बढ़ोतरी होती है। शुरू के 2-3 वर्ष में पौधों को सशक्त रूप व सही आकार देने के लिए इनके मुख्य तने पर 3-4 प्राथमिक शाखाएं यथोचित दूरी पर सभी दिशाओं में चुनते हैं। इसके बाद इसमें प्रति वर्ष कृन्तन करना अति आवश्यक होता है। बेर में फूल व फल नई शाखाओं पर ही बनते हैं। कटाई-छंटाई करने का सर्वोत्तम समय मई होता है, जब पौधे सुषुप्तावस्था में होते हैं। मुख्य अक्ष की शाखाओं की चौथी से षष्टम् द्वितीयक शाखाओं को स्तर (17-23 नोड) तक काटना चाहिए। साथ ही सभी द्वितीयक शाखाओं को उनके निकलने के स्थान के नजदीक से ही काटना चाहिए। इसके अतिरिक्त अनचाही, रोगग्रस्त, सूखी तथा एक दूसरे के ऊपर से गुजरने वाली शाखाओं को उनके निकलने के स्थान से ही हर वर्ष काट देना चाहिए।

सिंचाई

जड़ें मूसलाधारी एवं मरुदभिद प्रकृति की होने के कारण यदि एक बार स्थापित हो जाती हैं, तो इन्हें बहुत कम देखरेख की आवश्यकता पड़ती है। बेर का वृक्ष असिंचित क्षेत्रों में भी अच्छी पैदावार देने की क्षमता रखता है। बेर के बाग के चारों तरफ मजबूत मेड़बंदी कर देनी चाहिए। इससे वर्षा के पानी का उपयोग पेड़ अच्छी तरह कर सकते हैं। बेर के फलों की तुड़ाई अप्रैल के मध्य तक

बेर के वृक्ष की विशेषता

बेर के पौधे में कुछ ऐसे गुण हैं, जिसके कारण यह शुष्क क्षेत्रों में खेती के लिए बहुत ही सफल फलदार वृक्ष है। इन्हीं गुणों के कारण इसे बारानी का बादशाह कहा जाता है। इसकी जड़ मूसलादार होती है, जो मृदा की कठोर सतह को तोड़कर काफी गहराई तक पहुंचकर निचली सतह से जल शोषित कर पौधे को स्वस्थ रखती हैं। अन्य फल वृक्षों की तुलना में इसके पौधों को बहुत कम पानी की आवश्यकता पड़ती है। गर्मी के मौसम में जब अन्य फल वृक्षों को सिंचाई की आवश्यकता होती है उस समय इसकी पत्तियां झड़ जाती हैं। पौधा एक प्रकार से प्रसुप्तावस्था में आ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इसमें फूल तथा फल वर्षा ऋतु के बाद अगस्त-सितंबर में आते हैं। फल फरवरी से मार्च तक पकते हैं। इन्हीं गुणों के कारण बेर की बागवानी शुष्क तथा अर्धशुष्क क्षेत्रों के लिए लाभदायक सिद्ध हो रही है। बेर की खेती ऊष्ण व उपोष्ण जलवायु में आसानी से की जा सकती है, क्योंकि इसमें कम पानी व सूखे से लड़ने की विशेष क्षमता होती है। शीत ऋतु में पड़ने वाले पाले के प्रति यह अति संवेदनशील होता है। अत: ऐसे क्षेत्रों में जहां नियमित रूप से पाला पड़ने की आशंका रहती है, इसकी खेती नहीं करनी चाहिए।

समाप्त हो जाती है। फल तुड़ाई के बाद यह धीरे-धीरे प्रसुप्तावस्था में प्रवेश करने लगता है। मई-जून में यह पत्तीविहीन होता है। इस प्रकार अप्रैल से जून तक इन्हें पानी की आवश्यकता नहीं होती। यदि सिंचाई के साधन उपलब्ध हों, तो मध्य जून में पहली सिंचाई की जाती है। इसी के साथ खाद एवं उर्वरक की पहली मात्रा भी दी जाती है। वर्षा ऋतु के प्रारंभ के साथ पौधे में नए फुटाव शुरू हो जाते हैं, जिसके लिए वर्षा का पानी ही पर्याप्त है। सितंबर-अक्टूबर फूल निकलने का समय है। इस समय बाग की सिंचाई नहीं की जाती है। मध्य नवंबर तक फलन पूरा हो जाता है। फलों की वृद्धि के लिए बाग में नमी की आवश्यकता पड़ती है, अन्यथा काफी संख्या में फल गिर जाते हैं। यदि संभव हो तो अच्छी पैदावार के लिए इस समय एक सिंचाई आवश्यक है। इसके बाद 1-2 सिंचाई जनवरी-फरवरी में की जाती है। यह पैदावार में वृद्धि तथा अच्छे गुण वाले फल प्राप्त करने के लिए आवश्यक है।

नए लगाए गए बाग की सिंचाई 15-20 दिनों के अंतराल पर थाला विधि से करते हैं। इससे पौधे अच्छी तरह स्थापित हो जाते हैं। प्रत्येक सिंचाई के बाद बाग से खरपतवार निकालते रहे, इससे बाग की नमी व पोषक तत्व सुरक्षित रहते हैं।

खाद एवं उर्वरक

बहुत कम किसान बेर के बाग में खाद एवं उर्वरक का प्रयोग करते हैं। परिणामस्वरूप धीरे-धीरे पौधों की उत्पादन क्षमता घटती जाती है। समुचित वृद्धि व लगातार अच्छे उत्पादन के लिए प्रतिवर्ष खाद एवं उर्वरक को निम्न मात्रा डालने की सिफारिश की जाती है।

एक वर्ष विकसित पेड़ (5 वर्ष या अधिक) के लिए 40-50 कि.ग्रा. गोबर की खाद तथा 1.50 से 2.50 कि.ग्रा. यूरिया प्रतिवर्ष पर्याप्त है। आयु के अनुसार इसे कम करके डालना चाहिए। कम्पोस्ट या गोबर की खाद की पूरी मात्रा तथा आधी यूरिया की मात्रा जून-जुलाई तथा शेष यूरिया की मात्रा फलन के बाद नवंबर-दिसंबर में दी जानी चाहिए। खाद एवं उर्वरक की यह मात्रा पेड़ के तने से कुछ दूरी से जहां तक पेड़ का फैलाव हो, उसके बीच छिड़ककर मृदा में मिला दी जाती है। उर्वरक देने के बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए। यदि वर्षा की संभावना है या वर्षा कुछ पहले हुई हो तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। बारानी क्षेत्रों में 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का दो पर्णीय छिड़काव पहला फूल लगने के पहले तथा दूसरा फलन के बाद लाभदायक है। आवश्यकतानुसार फॉस्फोरस तथा पोटाश का प्रयोग भी किया जाना चाहिए।

बेर फल उत्पादन का आर्थिक विश्लेषण

शुष्क क्षेत्रों में बार-बार पड़ने वाले सूखे (अकाल) से मुकाबले के लिए बेर की बागवानी एक बहुआयामी सुरक्षा कवच है। इसी वजह से बेर की खेती अकाल के विरुद्ध एक बीमा की तरह है। कम व अनियमित वर्षा में यहां खरीफ फसलें अक्सर असफल हो जाती हैं, ऐसी स्थिति में भी बेर से कुछ न कुछ आमदनी जरूर मिलती है।

बेर की बागवानी न केवल सिंचित अवस्था में फायदे का सौदा है, बल्कि बारानी अवस्था में भी बहुत अच्छी आय देती है। स्वादिष्ट फलों के अलावा सूखी जलावन लकड़ी, पत्तियों का चारा तथा कांटेदार शाखाएं अतिरिक्त आमदनी का जरिया हैं। लागत-व्यय में एक बड़ा हिस्सा श्रम के रूप में है। यह लगभग 60 प्रतिशत तक आता है, क्योंकि इसमें वर्ष के अधिकांश समय में कुछ न कुछ कृषि क्रियाएं चलती रहने के कारण रोजगार के ज्यादा अवसर उपलब्ध रहते हैं।

राजस्थान में बेर का क्षेत्रफल वर्ष 2010-11 के मुकाबले वर्तमान (2016-17) में कम हुआ है। अगर प्रयास करने से 10 प्रतिशत क्षेत्रफल भी बढ़ता है, तो कुल क्षेत्रफल 6,950 हैक्टर हो जाएगा। उसी अनुपात में अगर उपज भी बढ़ती है, तो 46,970 मीट्रिक टन हो जाएगी। इसी प्रकार राजस्थान में उपज प्रति हैक्टर कम है। यदि उन्नत विधि से खेती की जाए तो यह 10,000 कि.ग्रा. अतिरिक्त तक आसानी से प्राप्त की जा सकती है। ये लक्ष्य प्राप्त करने के लिए राज्य एवं विश्वविद्यालय की प्रसार एजेंसियों को सकारात्मक दिशा में प्रयास करने होंगे। शेष सारे कारक राजस्थान में बेर की खेती के लिए अनुकूल हैं। साथ ही उन्नत खेती की उन्नत तकनीक अपनानी होगी। इसमें उन्नत किस्म की पौध उपलब्ध करना मुख्य है। किसानों को पैदावार का उचित मूल्य दिलाने के लिए उनको आश्वस्त भी करना होगा। ■

खरपतवार की बढ़ती समस्या

खरपतवार विदेशी आक्रमणकारियों की तरह आज हमारी वनस्पतियों के लिए एक गंभीर समस्या बन गए हैं। देश के कई क्षेत्रों में कुछ ऐसी वनस्पतियों ने अपनी जड़ें जमा ली हैं, जो पर्यावरण पर विपरीत असर डाल रही हैं। इन विदेशी खरपतवारों की वजह से जलवायु परिवर्तन में कई प्रकार के नुकसान हो रहे हैं। इनकी वजह से नदी-नालों के मुहाने बंद हो गए हैं। यह लगातार फैलते जा रहे हैं और गर्म जलवायु में शुष्क जलवायु की खरपतवारों से स्थानीय प्रजातियां नष्ट हो रही हैं,

घातक खरपतवार

'गाजर घास' 50 के दशक में अमेरिका से आयातित गेहूं के साथ आई थी। यह पूरे देश में आते ही फैल गई थी। *'विलायती बबूल'* भारत में मरुस्थलीय और अर्ध-मरुस्थलीय क्षेत्रों में पाई जाने वाली दक्षिण अमेरिका की प्रजाति है। 18वीं सदी से देश के लिए एक चुनौती बनी हुई है। *'लेंटाना कैमारा'* सन् 1809 में कलकत्ता के वनस्पति उद्यान में लगाने के लिए लाया गया। इस सजावटी पौधे ने उत्तराखंड में अपना राज्य स्थापित किया हुआ है। *'जलकुम्भी'* यह ऐसी दक्षिण अमेरिका की खरपतवार है, जो जल पर बहुत तेजी से फैलती है। जलीय ऑक्सीजन को बहुत तेजी से खींचती है। यह भी बंगाल में सजावट के लिए लाई गई थी। इसका प्रकोप अब पूरे भारत में फैला हुआ है। इसे बंगाल का आतंक भी कहा जाता है। 'जंगली पौधे' भी लगभग 173 आक्रामक खरपतवार हैं। ये देश के पर्यावरण के लिए सबसे बड़ा खतरा बने हुए हैं। इनकी प्रजातियां भूमि का क्षरण बहुत तेजी से कर रही हैं।

समुद्री एवं हवाई मार्ग से आने वाली इन विदेशी, आक्रामक एवं अनुपयोगी खरपतवारों की वजह से प्रकृति का संतुलन बिगड़ रहा है। भारत में काफी खाली जगह पर इन्होंने अपना कब्जा कर लिया है। हमारे देश के वैज्ञानिकों द्वारा इनकी उपयोगिता पर शोध कार्य किया जा रहा है, जैसे-लेंटाना की लकड़ी से फर्नीचर व गाजर-घास को कम्पोस्ट खाद तथा विभिन्न तरह से प्रयोग में लाया जा रहा है। ■

संसाधन संरक्षण

आम में टपक सिंचाई और पोषण प्रबंधन से अधिक लाभ

तरुण अदक, कैलाश कुमार और **विनोद कुमार सिंह**
केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, लखनऊ-226101 (उत्तर प्रदेश)

पृथ्वी पर पानी सीमित है तथा उसकी मात्रा धीरे-धीरे कृषि के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के प्रयोगों के कारण कम होती जा रही है। यही नहीं अनियमित वर्षा तथा जल का समुचित निकास न होने के कारण भूजल भी धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। इसका प्रभाव सीधे कृषि पर पड़ रहा है। टपक सिंचाई का प्रयोग करके अधिक फसल उत्पादन के साथ-साथ दक्षतापूर्वक जल का प्रयोग किया जा सकता है। वर्तमान परिस्थिति में इसकी बहुत आवश्यकता है। इससे प्राकृतिक संसाधनों का अनुपातिक उपयोग हो सकता है। ताकि कृषि में लागत कम होने के साथ-साथ उर्वरकों की कम मात्रा एवं पानी की बचत के साथ कृषकों को अधिक लाभ प्राप्त हो सके। जनसंख्या और विकास में निरंतर वृद्धि होने के कारण सामाजिक, आर्थिक आवश्यकताएं बढ़ती जा रही हैं। प्राकृतिक संसाधनों के अधिक उपयोग से उनकी मात्रा सीमित होती जा रही है। पानी का उपयोग हर क्षेत्र में उचित अनुपात में किया जाए, जिससे घरेलू विकास के साथ कृषि उत्पादन में निरंतर विकास होता रहे और पर्यावरण पर उसका ऋणात्मक प्रभाव भी न पड़े।

पोषक तत्वों का संतुलित प्रयोग न करने के कारण मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा कम हो रही है। पोषक तत्वों का असंतुलित होना और जल निकास की अच्छी व्यवस्था न होने से मृदा का स्वास्थ्य खराब होता जा रहा है। उत्तर प्रदेश के कई हिस्सों में अनियमित वर्षा होने के कारण पानी की रिचार्जिंग धीमी गति से होती है। यहां की वार्षिक वर्षा 800-1000 मि.मी. होती है। जल संसाधन दिनोंदिन सीमित होते जा रहे हैं। कृषि क्षेत्र में पानी की कमी की उभरती हुई समस्या के निदान के लिए टपक सिंचाई एकमात्र विकल्प है। समय पर जल की उचित मात्रा का उपयोग गुणवतायुक्त उत्पादन

के लिए आवश्यक है। टपक सिंचाई द्वारा सिंचाई से जड़ क्षेत्र में पानी के उपयोग से पानी की बचत के साथ पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता को बढ़ाया जा सकता है। पोषक तत्वों का उचित प्रबंधन उत्पादन के लिए लाभदायक साबित हुआ है। आम की क्रांतिक अवस्थाओं में पानी और पोषक तत्वों के प्रबंधन के लिए विस्तृत अध्ययन किया गया।

आम के वैज्ञानिक ढंग से रोपित 30 वर्षीय वृक्षों को (10 × 10 मीटर) शोध कार्य के लिए चयनित किया गया। इसमें पांच प्रति कृतियों में चार विभिन्न उपचारों से उपचारित किया गया। अनुशंसित उर्वरकों की मात्रा (1 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 0.5 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और एक कि.ग्रा. पोटाश) को प्रति पेड़ सितंबर में 30 सें.मी. चौड़ी और

आम के फूल

टपक या ड्रिप सिंचाई के लाभ

- इस विधि से 50-60 प्रतिशत तक पानी की बचत होती है।
- बचे हुए पानी से अधिक भूमि को सिंचित किया जा सकता है।
- फसल पैदावार अच्छी होती है।
- उर्वरक उपयोग की क्षमता 25-30 प्रतिशत बढ़ जाती है।
- उर्वरक कम और श्रम का मूल्य कम हो जाता है।
- इस सिंचाई प्रणाली के माध्यम से मृदा में रसायन उपचार किया जा सकता है।

पानी और पोषक तत्व पौधों की जड़ क्षेत्र में कोशिका के संयुक्त बलों के माध्यम से मृदा में जाते हैं। इस प्रकार पौधों को नमी तुरंत मिल जाती है। पोषक तत्व पौधों को भी सरलता से उपलब्ध हो जाते हैं। पृथ्वी पर जितना पानी है, उसका 97 प्रतिशत भाग खारा है। जल की खपत प्रत्येक 20 वर्ष में दोगुनी हो जाती है, जबकि पृथ्वी पर उपलब्ध जल की मात्रा सीमित है। कृषि एवं बागवानी में सिंचाई के लिए टपक सिंचाई जैसी विधि को अपनाकर जल संरक्षित करके अधिक उपज को प्राप्त किया जा सकता है।

आम के उत्पादन क्षेत्र में हर साल वृद्धि होने से किसानों को अधिक लाभ प्राप्त हो रहा है। कृषि तकनीकों के सुधार में सिंचाई का बहुत बड़ा योगदान है। दुनिया की खाद्यान्न आपूर्ति कृषि द्वारा ही पूरी की जाती है। पिछड़ी आर्थिक दशा और बढ़ती हुई जनसंख्या का भी कृषि भूमि एवं सिंचाई के पानी पर प्रभाव पड़ता है। देश के कृषि उत्पादन में सिंचाई का बहुत महत्व है। फल पट्टी मलिहाबाद क्षेत्र की अर्थव्यवस्था और कृषि उत्पादन में आम की हिस्सेदारी सबसे अधिक है। आम, भारत की एक महत्वपूर्ण फसल है। उत्तर प्रदेश प्रमुख आम उत्पादक राज्यों में से एक है। इसका बागवानों की आर्थिक दशा सुधारने में बहुत बड़ा योगदान है। इस क्षेत्र में आम को किसानों की आजीविका को सुरक्षित करने के लिए महत्वपूर्ण साधनों में से एक माना जाता है। इस क्षेत्र में आम की कई किस्मों का रोपण किया जाता है। इसमें दशहरी प्रजाति मुख्य है। यहां की मृदा और जलवायु गुणवत्तायुक्त उत्पादन के लिए उपयुक्त है। आम उत्पादन के लिए पानी एवं पोषक तत्वों का प्रबंधन आवश्यक होता है। हालांकि किसान अभी भी सिंचाई की पुरानी विधियों का प्रयोग करते हैं। इसके कारण पोषक तत्वों की हानि हो जाती है, जिससे लागत अधिक हो जाती है। किसानों की शिक्षा एवं जागरूकता कम होने के कारण वैज्ञानिक खेती करने में बहुत आगे नहीं बढ़ पा रहे हैं।

फल बनने की प्रक्रिया में टपक सिंचाई का प्रभाव

25 सें.मी. गहरी नालियों में डाला गया। ये नालियां पेड़ के तने से 2 मीटर की दूरी पर बनाई जाती हैं। इनमें उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है। उपचारित और अनुपचारित पौधों में शोध के दौरान उर्वरक निर्धारित मात्राओं को दिया गया। इसमें टपक सिंचाई के माध्यम से उर्वरक 75 (टी-2), 50 (टी-3) और 25 (टी-4) प्रतिशत की संस्तुत उर्वरक मात्राओं (आरडीएफ) को दो दिनों के अंतराल में दिया गया। टपक सिंचाई को 60 प्रतिशत खुली पैन वाष्पीकरण के आधार पर डिपर्स (8 लीटर/घंटा) के माध्यम से दिया गया। सभी पेड़ों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यक मात्रा को भी दिया गया।

टपक सिंचाई द्वारा अधिक उपज प्राप्ति

उर्वरक मात्रा

फल उपज के आंकड़ों से ज्ञात हुआ कि फसल के महत्वपूर्ण फेनॉलाजिक चरणों में एन.पी.के. की मात्रा टपक सिंचाई के साथ देने से बेसिन सिंचाई की अपेक्षा अधिक उपज प्राप्त हुई। सबसे ज्यादा फल उपज 72.6 कि.ग्रा. 75 प्रतिशत आरडीएफ में अंकित की गई। इसके बाद 50 प्रतिशत आरडीएफ में 62.3 कि.ग्रा. प्रति पेड़ उपज दर्ज की गई। बेसिन सिंचाई तुलना में (टी-1) वृद्धि टी-2, टी-3, और टी-4 में 15.2 से 59.9 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त हुई। किसानों को अधिक उपज प्राप्त करने के लिए आम की क्रांतिक अवस्था में फर्टिगेशन के द्वारा 25 प्रतिशत नाइट्रोजन, 50 प्रतिशत फॉस्फोरस और 15 प्रतिशत पोटाश की मात्रा तुड़ाई के बाद देनी चाहिए। शेष मात्राओं में 20 प्रतिशत नाइट्रोजन, 25 प्रतिशत फॉस्फोरस और 15 प्रतिशत पोटाश फूल आने पर देना चाहिए। 30 प्रतिशत नाइट्रोजन और 45 प्रतिशत पोटाश फल जब मटर के दाने के बराबर हों तब देना चाहिए, जिससे गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त हो सके। फल गुणवत्ता का आंकलन/विश्लेषण भी किया गया। इसमें विटामिन 'सी' की मात्रा 29. 76-36.56 मि.ग्रा./100 ग्राम पाई गई। आम मिठास एवं अम्लता पर महत्वपूर्ण प्रभाव देखने में नहीं मिला। वर्ष 2014-15 में उपचारित पेड़ों में सबसे अधिक उपज 118.4 कि.ग्रा. प्रति पेड़ (75 प्रतिशत आरडीएफ) में और सबसे कम उपज 101.8 कि.ग्रा. प्रति पेड़ बेसिन सिंचाई वाले प्लाट में दर्ज की गई।

गुणवत्तापूर्ण उपज

प्रयोगात्मक प्रक्षेत्र की जलवायु मुख्य रूप से उपोष्ण कटिबंधीय है। इसमें शुष्क गर्मियों की अपेक्षा ठंडी सर्दियां होती हैं। शोध के दौरान औसतन तापमान 17.7^0 से 39.9^0 सेल्सियस रहा और सापेक्ष आर्द्रता 40.8 से 89.2 प्रतिशत तक अंकित की गई। औसत मासिक हवा की गति 1 से 4.9 कि.मी./घंटा दर्ज की गई।

अधिक गुणवत्तायुक्त उत्पादन प्राप्त करने के लिए समय से सिंचाई एवं पोषक तत्वों का संतुलित मात्रा में उपयोग किया जाना चाहिए। टपक सिंचाई प्रौद्योगिकी के माध्यम से पानी व पोषक तत्व सीधे पौधों की जड़ क्षेत्र में उपलब्ध होते हैं। इसके कारण वृद्धि अधिक होने के साथ अधिक उपज प्राप्त हुई। टपक सिंचाई से पानी के उपयोग की दक्षता बेसिन सिंचाई करने की अपेक्षा अधिक पाई गई।

आम में बेसिन सिंचाई की तुलना में टपक सिंचाई से अधिक उपज प्राप्त हुई। सक्रिय जड़ क्षेत्र में जल और पोषक तत्व उपलब्धता के कारण अच्छा जल उपयोग, समुचित संतुलित पोषक तत्वों का प्रयोग एवं उचित रखरखाव से फसल का गुणवत्तायुक्त उत्पादन प्राप्त हुआ।

बड़ी इलायची: सिक्किम के किसानों की आजीविका का मुख्य आधार

आशुतोष गौतम, बी.ए. गुड़दे, के. धनपाल, शशांक शेखर बोरा, ए.बी. रमाश्री* और **रायल छेत्री**
भारतीय इलायची अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, मसाला बोर्ड, तादोंग, गंगटोक-737102 (सिक्किम)

बड़ी इलायची वानस्पतिक रूप से जिंजिबरेसी वंश की सदस्य है। इसे वानस्पतिक भाषा में *अमोमम सुबुलेटम* के नाम से जाना जाता है। यह विश्व के प्राचीनतम मसालों में से एक है। प्राकृतिक रूप से ये उपहिमालय क्षेत्रों में, मुख्यतः उच्च ऊंचाई (समुद्र तल से 1000-2200 मीटर) वाले ऐसे वन्य पारिस्थितिक तंत्र में उगती है, जहां छाया की उपलब्धता 50 प्रतिशत होती है। बड़ी इलायची सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, नगालैंड, पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले सहित कुछ अन्य पूर्वोत्तर राज्यों में उगाई जाने वाली मुख्य नकदी फसल है। सिक्किम को जनवरी 2016 में आधिकारिक रूप से जैविक राज्य का दर्जा दिया गया है। इसलिए सिक्किम में किसी भी प्रकार के संश्लेषित खाद, उर्वरक, कीटनाशक, पीड़कनाशी या खरपतवारनाशक इत्यादि का उपयोग सर्वथा वर्जित है। सिक्किम में खेती के सभी क्रियाकलाप जैविक खेती के अंतर्गत ही होते हैं।

बड़ी इलायची की खेती के लिए पूर्वी उप हिमालयों के नमी वाले उपोष्ण कटिबंध के अर्ध सदाबहार वनक्षेत्र अनुकूलतम हैं। ये छायाप्रिय पादप हैं, जो कि ऐसे क्षेत्रों में उगते हैं, जहां वार्षिक रूप से लगभग 200 दिनों की एवं 3000-3500 मि.मी. वर्षा होती है। बड़ी इलायची के पौधे आमतौर पर पहाड़ों की नमी और छायादार किनारों पर पहाड़ी ढलानों में पानी के स्रोत (छोटे झरने) के आसपास उगते हैं।

*भारतीय इलायची अनुसंधान संस्थान, मसाला बोर्ड, मैलादूमपारा, इडुकी-685553 (केरल)

मृदा

बड़ी इलायची के लिए उत्तम अपवाह वाली बलुई चिकनी मृदा सबसे अनुकूल है। ऐसे क्षेत्र जहां बड़ी इलायची की खेती की जाती है या जहां ये प्राकृतिक रूप से उगती हैं, वहां की मृदा सामान्यतः अम्लीय होती

है। इसका पी-एच मान 4.5-6.0 होता है। ऐसी मृदा में जैविक कार्बन एवं नाइट्रोजन की प्रचुरता होती है। यहां फॉस्फोरस और पोटेशियम की उपलब्धता सामान्य होती है।

नर्सरी

बड़ी इलायची बीज और सकर दोनों से ही उगती है। बीज से पादप उत्पादन का लाभ यह है कि बड़ी संख्या में रोगरहित बीजांकुर मिल जाते हैं। नर्सरी के लिए नीचे और मझधारियों के बीच की स्थिति से परिपक्व सम्पुट का चयन किया जाता है।

प्राथमिक रोपणी

प्राथमिक नर्सरी के लिए अक्टूबर-नवम्बर में बीजों की बुआई की जाती है। इसके लिए अच्छी तरह से सूखी हुई मृदा का 15-25 सें.मी. ऊंचाई, एक मीटर लंबाई तथा सुविधाजनक या उपयुक्त चौड़ाई का सीडबैड बनाना चाहिए। अपघटित खाद को मृदा में अच्छी तरह से मिश्रित किया जाता है। सीडबैड को उपयुक्त आकार एवं संरचना में लाया जाता है। लगभग 80-100 ग्राम बीज सीडबैड में रैखिक रूप में 10 सें.मी. की दूरी पर बोया जाता है। सीडबैड को घास-पत्ते से ढक दिया जाता है। सीडबैड में नमी बनाए रखने के लिए नियमित अंतराल में पानी का छिड़काव करें। बुआई के 25-30 दिनों के बाद अंकुरण की शुरुआत हो जाती है। एक निर्धारित औसत अंकुरण प्रतिशत प्राप्त हो जाए तो सीडबैड से घास-पत्ते को सावधानीपूर्वक हटा दें। पंक्तियों के बीच का अंतर स्थान बारीक कटे हुए धान के पुआल या पत्तियों से ढक देना चाहिए। सीडबैड को बांस की चटाई, छपरैल या अन्य उपयुक्त साधन से छाया प्रदान की जानी चाहिए। जब बीजांकुरों में 3-4 पत्ती की वृद्धि हो जाए तो इन्हें द्वितीयक रोपणी में प्रतिरोपित कर देना चाहिए।

पॉलीबैग रोपणी

द्वितीयक रोपणी पॉलीबैग या उभरे सीडबैड में बनाई जा सकती है। इसके लिए 15 × 15 सें.मी. आकार के पॉलीबैग पोटिंग मिश्रण (मृदा, बालू, गोबर 4:1:1) से भर लिए जाते हैं। बीजांकुर को अप्रैल से मई के बीच रोपित किया जाता है। नियमित रूप से पानी का छिड़काव करें तथा उपयुक्त छाया में रखें। 10-12 माह में बीजांकुर मुख्य क्षेत्र में प्रतिरोपण के लिए तैयार हो जाते हैं।

खेत की तैयारी

सारणी 1. स्थानीय किस्में

क्र. सं.	किस्म	अनुकूल ऊंचाई (मीटर)	विशिष्टता
1	सावने	975-1500	विस्तृत अनुकूलता, दृढ़ वृद्धि, संपुट का आकार मध्यम-बड़ा, उच्च पैदावार
2	रामसे	≥1500	दृढ़ वृद्धि, खड़ी ढाल वाले क्षेत्रों के लिए अनुकूल, छोटे संपुट, उच्च पैदावार
3	द्जोंगू गोलसे	<975	सामान्य वृद्धि, उत्तर सिक्किम के द्जोंगू क्षेत्र के लिए अनुकूल
4	वरलांगे	≥1500	दृढ़ वृद्धि, संपुट का आकार बड़ा, उच्च पैदावार
5	रामला	≥2000	दृढ़ वृद्धि, मध्यम उपज, संपुट का आकार बड़ा
6	सेरेम्ना	800-900	कम दृढ़ता पर उच्च पैदावार, 2-3 स्पाइक/ टिलर
भारतीय इलायची अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, मसाला बोर्ड, तादोंग, गंगटोक (सिक्किम) द्वारा विकसित उच्च पैदावार किस्में			
7	आईसीआरआई सिक्किम-1	1500-1650	लम्बोत्तर चौड़ी पत्ती, उच्च पैदावार, दृढ़ वृद्धि, मैरून वर्ण सम्पुट
8	आईसीआरआई सिक्किम-2	1500	उच्च पैदावार, दृढ़ वृद्धि, गाढ़े मैरून वर्ण सम्पुट

द्वितीयक रोपणी

इसकी विधि भी प्राथमिक रोपणी के समान है। 3-4 पत्तियों वाले बीजांकुर मई-जून में 15 सें.मी. के अंतराल में क्यारी में प्रतिरोपित कर देने चाहिए। क्यारियों के बीच की जगह धान की पुआल या सूखी पत्तियों से ढक देनी चाहिए। क्यारियों के ऊपर छाया के लिए पंडाल बना देना चाहिए। क्यारियों की नियमित रूप से सामान्य सिंचाई करते रहना चाहिए ताकि मृदा में नमी बनी रहे। जब बीजांकुर 45-60 सें.मी. के एवं 2-3 टिलर वाले हो जाएं तो उन्हें जून-जुलाई में मुख्य क्षेत्र में प्रतिरोपित कर देना चाहिए।

इलायची की नर्सरी

सकर पैदावार रोपणी

सकर रोपणी में सकर का उत्पादन करते

इलायची की द्वितीयक नर्सरी

इलायची के दाने

हुए इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए कि उत्पादन के लिए प्रयुक्त मातृ सकर रोगों से मुक्त हो एवं रोपणी मुख्य बागान से कम से कम 500 मीटर की दूरी पर होनी चाहिए। सकर रोपणी के लिए क्यारियों की चौड़ाई 30 × 30 सें.मी. की होना चाहिए। लंबाई सुविधानुसार परिवर्तित की जा सकती है। दो क्यारियों के बीच 30 सें.मी. का अंतराल होना चाहिए। अच्छी तरह से अपघटित जैव खाद मृदा के साथ इन क्यारियों में मिला दी जाती है। मई-जून में रोपण ईकाइयां (कायिक कोपल सहित छद्म तना) क्यारियों में रोपित कर दी जाती हैं। रोपण के बाद पौधे के आधार के आसपास सूखी पत्तियों या पुआल से पलवार की जानी चाहिए। इससे मृदा में नमी बनी रहती है।

मुख्य क्षेत्र की तैयारी

मुख्य क्षेत्र को अच्छी तरह से साफ किया जाना चाहिए। उसमें किसी प्रकार की घासफूस या खरपतवार न हो। जल प्रवाह, खाद के गड्ढे एवं भट्टी इत्यादि का समुचित विन्यास होना चाहिए। प्रतिरोपण के लिए गड्ढे का आकार 30 × 30 × 30 सें.मी. तथा इनके बीच की दूरी 1.5 × 1.5 मीटर होनी चाहिए (दृढ़ किस्मों के लिए 1.8 × 1.8 मीटर)। गड्ढे समोच्च होने चाहिए। गड्ढे को अवमृदा एवं जैव खाद (4-5 कि.ग्रा./गड्ढा) से भर देना चाहिए। सब उपक्रम मानसून से पूर्व पूरे कर लिए जाने चाहिए। बड़ी इलायची में प्रतिरोपण का अनुकूलतम समय जून से जुलाई है। सकर का अधिक गहराई तक प्रतिरोपण नहीं करना चाहिए।

छाया

बड़ी इलायची एक छायाप्रिय प्रजाति है, इसकी उत्तम वृद्धि के लिए 50 प्रतिशत छाया आवश्यक है। प्रतिरोपण के पूर्व मुख्य क्षेत्र में समुचित छाया प्रबंधन कर लेना चाहिए। इसके लिए ऐसे पेड़ लगाने चाहिए, जो दीर्घायु, मजबूत तने वाले, मूसला जड़ों वाले, तीव्र वृद्धि वाले एवं नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले हों। पानीसाज, उतिस, मालितो, अगली, असारे, बिलौने, खराने, सिरिस, फलेद, झिंगानी, चिलवाने इत्यादि सिक्किम में मुख्य रूप से लोकप्रिय छायादार पेड़ हैं। ये बड़ी इलायची के बागानों में लगाए जाते हैं। यद्यपि ध्यान दिया जाना चाहिए कि बागान में छाया अधिक न हो अन्यथा पौधे की वृद्धि एवं फसल उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

पोषण प्रबंधन

अनवरत स्थिर उत्पादकता के लिए बड़ी इलायची में अप्रैल-मई में अच्छी तरह से विघटित अपशिष्ट खाद (4-5 कि.ग्रा./पौध) एवं कृमि खाद (500 ग्राम/पौध) डाल देनी चाहिए।

सिंचाई

बड़ी इलायची में जड़ तंत्र उथला होता है। इसलिए यह पानी की कमी के लिए संवेदनशील होती है। सिक्किम में अक्टूबर से मार्च तक का समय शुष्क अवधि होती है। अतः इस अवधि में फसल की नियमित रूप से सिंचाई करनी चाहिए। सतही पलवार भी मृदा में नमी को बनाए रखने में अत्यंत उपयोगी है।

निराई

बड़ी इलायची में निराई सामान्यतः एक वर्ष में तीन बार की जाती है। इससे प्रभावी रूप से खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता है। निराई के बाद इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि निराई के अपशिष्ट पुष्पक्रम को न ढकें अन्यथा परागण में तकनीकी बाधा आयेगी।

सस्यन

बड़ी इलायची में सस्यन का तात्पर्य पके हुए संपुटक को तोड़ना है। जब संपुटक भूरे या काले रंग का हो जाए तो यह उसकी परिपक्वता को दर्शाता है। पक्वन की प्रक्रिया को तीव्र करने के लिए फलित टिलर को 35-45 सें.मी. ऊंचाई से काट दिया जाता है। पूर्ण परिपक्वता के लिए 10-15 दिनों तक इसी अवस्था में छोड़ दिया जाता है। उपयुक्त प्रबंधन एवं अन्य परिस्थितियों के आधार पर रोपण के चौथे वर्ष से 300-1000 कि.ग्रा./हैक्टर का उत्पादन अपेक्षित है। उत्तम प्रबंधन से बड़ी इलायची के बागान 15-16 साल तक अच्छा उत्पादन एवं स्थिरता प्रदान कर सकते हैं।

प्रसंस्करण

तोड़े गए पके हुए संपुटक में 72-80 प्रतिशत तक नमी रहती है। इसे उपचार के द्वारा 10-12 प्रतिशत तक लाया जाता है। पारंपरिक रूप से बड़ी इलायची का प्रसंस्करण स्थानीय निर्मित भट्टियों में होता है। इसमें संपुटक को प्रत्यक्ष ऊष्मा से शुष्क किया जाता है। प्रत्यक्ष उष्मन से संपुटक का रंग गहरा भूरा या काला हो जाता है। इससे उत्पाद का अच्छा मूल्य नहीं मिलता है। मसाला बोर्ड द्वारा अनुशंसित एवं रूपांकित भट्टी का उपयोग करने से संपुटक का रंग गुलाबी रहता है। यह क्रेताओं द्वारा अपेक्षित है एवं अच्छा मूल्य मिलता है।

बड़ी इलायची सिक्किम की मुख्य नकदी फसल है एवं यहां की जलवायु भी इस फसल के लिए अनुकूलतम है। इसकी खेती में अन्य नकदी फसलों की अपेक्षा फसल प्रबंधन आसान है। राज्य के कृषक भी फसल उत्पादन प्रक्रमों में निपुण हैं। बड़ी इलायची की खेती में लागत कम है, किन्तु लाभांश बहुत ज्यादा है। बड़ी इलायची की खेती का न केवल अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान है, बल्कि यह पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण तथा मानव स्वास्थ्य में भी अहम भूमिका निभाती है। राज्य की उल्लेखनीय फसल होने के नाते इस फसल की उत्पादकता में वृद्धि के लिए इसकी खेती के क्षेत्रफल में बढ़ोतरी की नितांत आवश्यकता है।

जानकारी

नवंबर-दिसंबर में बागों के आवश्यक कृषि कार्य-कलाप

राम रोशन शर्मा[1] और **हरे कृष्णा**[2]

शरद ऋतु के पश्चात हेमंत ऋतु का आगमन होता है। यह नवंबर से दिसंबर के दौरान पड़ता है। हेमन्त ऋतु का आगमन होते ही पेड़ों से पत्ते झड़ने लगते हैं। पुराने पत्ते पीले होकर पेड़ों से गिरते हैं, ताकि नये पत्ते उनकी जगह ले सकें। नव-निर्माण का सन्देश देने वाली यह ऋतु प्राकृतिक एवं उद्यानिकी दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। इस ऋतु के आरंभ के साथ ही उद्यान में किए जाने वाले कृषि-कलापों का महत्व भी बढ़ जाता है। इस अवधि के दौरान जहां अमरूद और नीबूवर्गीय फल के पके फलों के विपणन की व्यवस्था करनी होती है, वहीं बागों में खाद का प्रयोग भी करना होता है।

नवंबर से दिसंबर की द्विमाही में छोटे पौधों को पाले से बचाने की भी विशेष व्यवस्था करनी होती है। पाले की समस्या शीतोष्ण फलों की अपेक्षा उष्ण और उपोष्ण कटिबंधीय फलों विशेषकर केला, पपीता, लीची, आम इत्यादि में ज्यादा होती है। अत: पौधों को छप्पर लगाकर या धुआं देकर या सिंचाई करके पाले से बचाने की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। इस द्विमाही में बागों में किए जाने वाले प्रमुख कृषि कार्यों का क्रमवार विवरण नीचे दिया जा रहा है।

[1]खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012; [2]भाकृअप-केंद्रीय शुष्क बागवानी अनुसंधान संस्थान, बीछवाल, बीकानेर-334006

आम

नवंबर में 'शीर्षारंभी' रोग के लक्षण आम हैं। इसलिए मृत ऊतकों से हरे भाग के 5-10 सें.मी. की कटाई करनी चाहिए। कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत का 15 दिनों के अंतराल पर दो बार) छिड़काव करना चाहिए। इसके दौरान बगीचे में जुताई कर खरपतवार को निकाल दें। जुताई से मिलीबग कीट के अंडे और प्यूपे नष्ट हो जाते हैं। इससे इस कीट को नियंत्रित करने में भी सहायता मिलती है। मिलीबग कीट को पेड़ों पर चढ़ने से रोकने के लिए 30-45 सें.मी. चौड़ी 400 गेज की एल्काथेन पॉलीथीन को जमीन से 40-60 सें.मी. तने के ऊपर बांधना चाहिए। पॉलीथीन को बांधने से पहले छाल के सभी छिद्रों और दरारों को मिट्टी से पलस्तर अथवा पॉलीथीन के निचले सिरे की तरफ ग्रीस का प्रयोग करना चाहिए अन्यथा कीट उन दरारों से होकर पेड़ों पर चढ़ सकते हैं। उस अवस्था में जब निम्फ (किशोर कीट) वृक्ष पर चढ़ चुके हों, वहां नीम के बीज की गिरी के सत (5 मि.ली. प्रति लीटर) अथवा नीम के तेल (5 मि.ली. प्रति लीटर+डिटर्जेंट पाउडर 1 ग्राम प्रति लीटर) के घोल का छिड़काव करें। वैकल्पिक रूप से कार्बोसल्फॉन (1 मि.ली. प्रति लीटर पानी) का छिड़काव अथवा थालों में क्लोरोपाइरीफॉस कणिकाओं (250 ग्राम प्रति वृक्ष) का प्रयोग किया जाना चाहिए। यह ऋतु छाल खाने वाले कीट को नियंत्रित करने के लिए भी सर्वथा उपयुक्त है।

केले का पर्ण रोग

कीट द्वारा बनाए गए छिद्रों की पहचान कर उनमें मोनोक्रोटोफॉस (0.05 प्रतिशत) अथवा पेट्रोल से भीगी रूई को डालें। इसके बाद उन्हें गीली मिट्टी से बंद कर दें। समय से पहले निकलने वाले पुष्प गुच्छों को काटकर अलग कर दें, ताकि गुच्छा रोग के प्रकोप को कम किया जा सके। नवंबर-दिसंबर में आम के बाग में सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। परंतु भूमि की आवश्यक निराई-गुड़ाई के पश्चात हल्की सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। वृक्षों को पाले से बचाने के लिए धुआं और हल्की सिंचाई करें। नर्सरी में पौधों को पाले से बचाने के लिए उन्हें छप्पर से ढक देना चाहिए। नए बाग के छोटे पौधों को पुआल अथवा अल्काथेन की चादरों से बने छप्परों से ढक दें परंतु उन्हें पूर्व दिशा में खुला छोड़ दें। इससे पौधों को उचित मात्रा में प्रकाश तथा हवा प्राप्त हो सकेगी। दिसंबर में 10 वर्ष से ज्यादा आयु के वृक्षों में 1500 ग्राम फॉस्फोरस तथा 1000 ग्राम पोटाश प्रति वृक्ष की दर से दें। साथ ही गोबर की अच्छी तरह से सड़ी खाद (30 से 40 कि.ग्रा./वृक्ष) का प्रयोग अवश्य करें।

अमरूद

नवंबर में अमरूद के बागों में निराई-गुड़ाई और सिंचाई की व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके साथ ही नवंबर-दिसंबर में गोबर की अच्छी तरह से सड़ी-गली खाद को रासायनिक उर्वरकों जैसे सिंगल सुपरफॉस्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश के साथ दिया जाना चाहिए। यूरिया की आधी मात्रा भी नवंबर में दी जानी चाहिए। शेष आधी मात्रा जुलाई में देनी चाहिए। छह वर्ष के पौधे को सामान्यत 60 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 1 कि.ग्रा. यूरिया, 2.5 कि.ग्रा. एसएसपी और आधा कि.ग्रा. एमओपी दिया जा सकता है। 75 ग्राम नाइट्रोजन, 65 ग्राम फॉस्फोरस और 50 ग्राम पोटेशियम प्रति वृक्ष प्रति वर्ष के दर से भी दिया जा सकता है। यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि उर्वरकों की खुराक केवल मृदा परीक्षण के आधार पर ही हो। अमरूद पोषी जड़ 25 सें.मी. गहराई तक मृदा की सतह में पाई जाती है। उर्वरकों के बेहतर उपयोग के लिए उन्हें पेड़ के तने से 1 मीटर की दूरी पर 25 सें.मी. खाइयों में दिया जाना चाहिए।

नवंबर-दिसंबर में वृक्षों को तथा छोटे पौधों को पाले से बचाने की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। छाल खाने वाले कीट की रोकथाम मोनोक्रोटोफॉस 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छेदों में भरकर चिकनी मृदा से लेप कर दें। पके फलों को पक्षियों के प्रकोप से बचाने के लिए वृक्षों पर पक्षियों को डराने वाला चमकीला फीता लगाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त मानवाकार पुतलों (बिजूका) या पटाखों की ध्वनि से भी पक्षियों को बागों से दूर रखा जा सकता है। तैयार पके फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। स्टूलिंग विधि से पौधे तैयार करने के लिए 2-3 वर्ष के पौधों को जमीन से 4-5 इंच ऊंचाई पर काट दें। इससे उनमें अगली तिमाही में फुटाव आयेगा।

तैयार आंवले के फल

सेब

नवंबर में उद्यान की सफाई कर निराई-गुड़ाई कर देनी चाहिए। दिसंबर में नए बाग लगाने के लिए गड्ढों को प्रथम सप्ताह तक भर देना चाहिए। निचले पहाड़ी इलाकों में जहां ठंड ज्यादा नहीं रहती है वहां इसकी रोपाई इसके अंत तक कर सकते हैं। अच्छी फसल के लिए उद्यान

सेब का बगीचा

में 2-3 किस्मों का होना आवश्यक है। अधिक ठंड वाले क्षेत्रों में पौधों की काट-छांट का कार्य भी करें। तदोपरांत कटे हुए भाग का चौबटिया लेप से लेपन करें। चौबटिया लेप कॉपर-कार्बोनेट, रेड लेड और अलसी के तेल को 4:4:6 के अनुपात में मिलाकर तैयार कर सकते हैं। तना सड़न रोग की रोकथाम के लिए डायथेन एम-45 अथवा बाविस्टिन के घोल का तने के चारों ओर छिड़काव करें। संजोस स्केल कीट की रोकथाम के लिए हिन्दुस्तान पेट्रोलियम, स्प्रे ऑयल अथवा एग्रो स्प्रे ऑयल का छिड़काव दिसंबर में अवश्य करें।

अनन्नास

इस अवधि में फसल निर्धारण के लिए पौधों की पत्तियों में 25 पीपीएम नेफ्थेलिन एसिटिक अम्ल का घोल रात के समय डालें। जो फल तैयार हों उनकी समय पर तुड़ाई कर बाजार भेजने की व्यावस्था करें। अनन्नास में रोग या कीट से ग्रस्त भागों और पौधों को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए। घास-पात को हटाएं

पका अनन्नास

एवं बागों में पलवार का प्रबंध करें। इससे मृदा में पर्याप्त नमी बनी रहेगी एवं खरपतवार भी नियंत्रित रहेंगे। मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु, अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें। पौधे की आयु के अनुसार फॉस्फोरस और पोटाश दें। कीट एवं रोगों से बचने के लिए 2 प्रतिशत नीम के तेल का छिड़काव करें। जिन फसलों में कीट तथा रोग कम लगते हैं, उन्हें बाग की सीमा के पास लगाएं।

जड़छेदक कीट द्वारा हानि

पपीता

पहले लगाए गए पौधों की सिंचाई करनी चाहिए। उद्यान की सफाई करके खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। नवंबर के पहले और तीसरे हफ्ते में हल्की सिंचाई करने के पश्चात उद्यान में निराई-गुड़ाई करें। दिसंबर में फॉस्फोरस तथा पोटाशयुक्त उर्वरक को मृदा में भलीभांति मिलाएं तथा गोबर की अच्छी तरह से सड़ी हुई खाद का प्रयोग करें। पौधों को पाले से बचाने के लिए उद्यान में धुआं करें एवं पौधों को पुआल या पॉलीथीन से ढकने की व्यवस्था करें।

केला

नवंबर-दिसंबर में केले में प्रति पौधा 55 ग्राम यूरिया का प्रयोग करें तथा 10 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करें। पर्ण चित्ती एवं फल सड़न रोग के लिए 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें। 15 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई अवश्य करें। यदि पौधों पर लवणों की कमी के लक्षण दिखाई दें तो क्रमशः फेरस सल्फेट (0.5 प्रतिशत), जिंक सल्फेट (0.5 प्रतिशत) और बोरेक्स (0.5 प्रतिशत) का पर्णीय छिड़काव करें। केला पाले के प्रति बहुत संवेदनशील होता है। दिसंबर में पौधों को पाले से बचाने की विशेष व्यवस्था करें। इसके लिए उद्यान में रात के समय धुआं करें एवं समय-समय पर ओवरहेड फुहारा विधि द्वारा बाग में पानी का छिड़काव करते रहें।

आंवला

विभिन्न क्षेत्रों में आंवला के फलों की तुड़ाई नवंबर-फरवरी के बीच होती है। जिन क्षेत्रों में इसकी तुड़ाई का कार्य नवंबर-दिसंबर में हो। उनमें इस दौरान फलों से लदे वृक्षों को बांस-बल्ली की सहायता से सहारा देने की व्यवस्था की जानी चाहिए। इससे शाखाओं को टूटने से रोका जा सकता है। इस दौरान फलों का भी विकास होता है। सिंचाई की भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। परंतु ध्यान रहे कि तुड़ाई से 15 दिनों पूर्व सिंचाई रोक दी जाए ताकि फल समय से तैयार हो सकें।

खजूर का बगीचा

दीमक से बचाव के लिए फोरेट 10जी प्रति पौधा 25-30 ग्राम डालकर मृदा में मिला दें। शूट गाल मेकर कीट से ग्रस्त टहनियों को काटकर जला दें। पेड़ों पर डाइमेथोएट 2 मि.ली. एवं मैंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। फलों के झड़ने की समस्या होने पर बोरेक्स (0.6 प्रतिशत) का छिड़काव करें।

दिसंबर में फल गलन की समस्या होने पर ब्लाइटॉक्स (3 ग्राम/लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें। तैयार हो चुके फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था भी करें।

अनार

इस द्विमाही में अनार को बैक्टीरियल ब्लाइट, कवक रोगों और हानिकारक कीटों से बचाने के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (0.5 ग्राम प्रति लीटर जल में), मेंकोजेब 75 घुलनशील चूर्ण (2 ग्राम प्रति लीटर जल में) में टीपोल या ट्वीन 20 (0.5 मि.ली. प्रति लीटर की दर से) का छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त बोर्डो मिश्रण (0.5 प्रतिशत) तथा ब्रोनोपोल (0.5 ग्राम प्रति लीटर जल में) केप्टान 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण (2 ग्राम प्रति लीटर जल में) का पांच से सात दिनों के अंतराल पर छिड़काव भी लाभकारी होता है। मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु, अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें।

चीकू

इस द्विमाही में चीकू में दीमक से बचने के लिए क्लोरोपाईरीफॉस (2 मि.ली. प्रति लीटर जल में) का छिड़काव करें। जमीन के नीचे तथा मुख्य शाखा के निचले हिस्से से निकलने वाले अंकुरों को निकाल दें। मूलवृंत से निकलने वाली शाखाओं को निकाल दें। मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु, अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें। बाग से घास-पात को निकालते रहें। बाग में सफाई का ध्यान रखें ताकि कीटों से होने वाली हानि से बचा जा सके।

खजूर

नवंबर-दिसंबर में खजूर के बागों में कोई विशेष कार्य नहीं किया जाता है। इस दौरान 15 दिनों के अंतराल पर वृक्षों की सिंचाई की जानी चाहिए। खजूर में इस दौरान कोई व्याधि नहीं होती है। किसी व्याधि अथवा कीट का प्रकोप हो तो उसकी निगरानी रखी जानी चाहिए ताकि समय पर उचित प्रबंधन किया जा सके।

कटहल

इस अवधि में पेड़ की पतली शाखाओं पर नर पुष्प निकलते हैं। यह कालांतर में झड़ जाते हैं। ग्राफ्टिंग द्वारा प्रवर्धन के लिए नवंबर उपयुक्त होता है। चूर्णिल रोग का प्रकोप होने

लीची

नवंबर में प्ररोह से निकालने वाले नए सांकुरों को निकाल दें। यदि छाल खाने वाले कीट का प्रकोप दिखाई दे तो उसकी व्यवस्था करें। दिसंबर में जिंक सल्फेट (2 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव

लीची में पुष्पन

अथवा प्रति वृक्ष 20-25 ग्राम की दर से मृदा में मिलाएं। जिंक की उपलब्धता के कारण मादा पुष्पों की संख्या बढ़ जाती है। नवंबर-दिसंबर में लीची में पुष्पन आरंभ हो जाता है। इस अवधि में उद्यान में नमी की उचित मात्रा को बनाए रखना आवश्यक है। लीची में 'मिलीबग' की रोकथाम के लिए प्रति वृक्ष 250 ग्राम क्लोरोपाइरीफॉस कणिकाओं का बुरकाव पेड़ के 1 मीटर के घेरे में कर दें। पेड़ के तने पर जमीन से 30-40 सें.मी. की ऊंचाई पर 400 गेज वाली एल्काथीन की 30 सें.मी. चौड़ी पट्टी सुतली आदि से कसकर बांध दें। इसके दोनों सिरों पर गीली मिट्टी या ग्रीस से लेप कर दें, पेड़ पर मिलीबग का प्रकोप नहीं होगा। दिसंबर में गोबर की अच्छी तरह से सड़ी खाद (25 से 30 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष) का उद्यान में प्रयोग करें। नए बागों में छोटे पौधों को पाले से बचाने के लिए समुचित व्यवस्था करें।

अंगूर की काट-छांट है जरूरी

पर डाइथेन एम-45 (2 ग्राम/लीटर पानी में) का छिड़काव करें। मिलीबग कीट की रोकथाम के लिए वृक्षों पर आम की भंति पॉलीथीन लगाएं।

लोकाट

नवंबर में लौकाट में फूल आते हैं, अतः इस दौरान बागों में सिंचाई नहीं की जानी चाहिए। दिसंबर में फल लगने शुरू होने के बाद 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की जानी चाहिए। इससे फलों का विकास होता है। नवंबर में ही पॉलीथीन की चादरों से पलवार लगानी चाहिए, ताकि भूमि की नमी को संरक्षित किया जा सके।

नीबूवर्गीय फल

नवंबर-दिसंबर में बहुत से नीबूवर्गीय फलों के फल तुड़ाई के लिए तैयार होना शुरू हो जाते हैं। इसी समय फलों का तुड़ाई-पूर्व गिरना एक गंभीर समस्या है। फलों को गिरने से रोकने के लिए 10 पी.पी.एम. 2,4-डी (1 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव अवश्य करें। दिसंबर में नीबूवर्गीय फलों में गोंदार्ति की आशंका बढ़ जाती है। इसकी रोकथाम के लिए प्रभावित हिस्से वाली छाल को खुरचकर निकाल दें। तदोपरांत बोर्डो लेप (1:2:20) का प्रयोग खुरचे भाग एवं इसके चारों ओर के स्वस्थ भाग पर करना चाहिए। दिसंबर में तैयार फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें।

आड़ू, खुबानी, आलूबुखारा

दिसंबर में नए बाग लगाने के लिए गड्ढों को भर देना चाहिए। गड्ढा भरने के लिए गोबर की खाद 15 से 20 कि.ग्रा./गड्ढा तथा फॉस्फोरसयुक्त उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। इन पौधों की काट-छांट का कार्य भी करें। जड़छेदक कीट से बचाव के लिए क्लोरपाइरीफॉस का प्रयोग करें। तराई और मैदानी क्षेत्रों में आड़ू की रोपाई का कार्य दिसंबर के अंत तक समाप्त कर लें।

अंगूर

नबंवर में अंगूर के बाग की सफाई कर इसे खरपतवार मुक्त रखें। हल्की सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई अवश्य करें। दिसंबर नए उद्यान लगाने के लिए अच्छा होता है। इसके अंतिम सप्ताह में एक वर्ष पुरानी जड़ सहित लताओं को गड्ढों के बीच में लगाकर सिंचाई करनी चाहिए। रोपाई के बाद नीचे से 15 सें.मी. की ऊंचाई से पौधों को छांटना चाहिए। दिसंबर में अंगूर की लताएं सुसुप्तावस्था में आ जाती हैं। इस अवस्था में लताओं से पत्तियां पीली होकर झड़ जाती हैं। इसी समय अंगूर की कटाई-छंटाई (प्रूनिंग) का कार्य किया जा सकता है।

बेर

इस दौरान बेर में फल-मक्खी का प्रकोप ज्यादा होता है। विकसित हो रहे फलों में अंडे देती हैं। अतः प्रभावित फलों को इकट्ठा कर नष्ट कर दें। फल-मक्खी की रोकथाम के लिए क्रमशः मोनोक्रोटोफॉस और रोगर के घोल का 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त बागों में 4-5 जगहों पर यूजीनॉल + मेलाथियान + गुड़ का घोल बनाकर खुले बर्तनों में रखें। फल-मक्खियां इस घोल की ओर आकर्षित होती हैं और खाकर मर जाती हैं। तनाछेदक कीट का प्रकोप होने की अवस्था में रूई को मोनोक्रोटोफॉस अथवा पेट्रोल से भिगोकर कीटों द्वारा तने में बनाए गए छिद्रों को भर दें। इसके पश्चात इसे मिट्टी से बंद कर दें ताकि कीट उसी में मर जाएं। बेर में फलों का झड़ना भी एक प्रमुख समस्या है। इसकी रोकथाम के लिए 2, 4 डी (10-15 पी.पी.एम.) का छिड़काव लाभदायक है। इन रसायनों के छिड़काव से फलों के झड़ने में अभूतपूर्व कमी होती है। प्रथम छिड़काव सितंबर या अक्टूबर में हो जाना चाहिए, जब वृक्ष पर फूल पूरी तरह से आ जाएं। दूसरा छिड़काव प्रथम छिड़काव के पश्चात करें।

फल-मक्खी से ग्रसित बेर

स्ट्रॉबेरी में पलवार

स्ट्रॉबेरी

खेत तैयार करने से पहले 40-50 टन प्रति हैक्टर की दर से गोबर की गली-सड़ी खाद डाल लें। तदोपरांत खेत की जुताई करें। बाग लगाने के लिए 10 × 3 × 0.5 फुट आकार की क्यारियां तैयार कर लें। अक्टूबर के अंत या नवंबर की शुरूआत में उद्यान में स्ट्रॉबेरी के पौधों की रोपाई करें। नवंबर में रोपित पौधों से फुटाव शुरू हो जाएगा। फुटाव शुरू होने पर बाग की निराई-गुड़ाई करके खरपतवार आदि निकाल देना चाहिए। पौधों में जब 4-5 पत्तियां आ जाएं तो नाइट्रोजन की प्रथम मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। दिसंबर में पत्तियों का धब्बा रोग दिखने पर डाइथेन एम-45 (2 ग्राम/लीटर पानी में) या बाविस्टिन (1 ग्राम/लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें। यदि संभव हो तो क्यारियों पर पॉलीथीन का टैंट लगा दें। जिससे पौधों की अच्छी बढ़त हो। दिसंबर में नाइट्रोजन व पोटाश की शेष मात्रा अवश्य दें। पौधों की नियमित अंतराल पर सिंचाई करते रहें। पौधों में पलवार (मल्चिंग) की भी उचित व्यवस्था करें। मल्चिंग के लिए सुविधानुसार पुआल, पौधों की पत्तियों, पॉलीथीन आदि का प्रयोग करें। ■

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के प्रकाशन

JOURNALS | **HANDBOOKS**

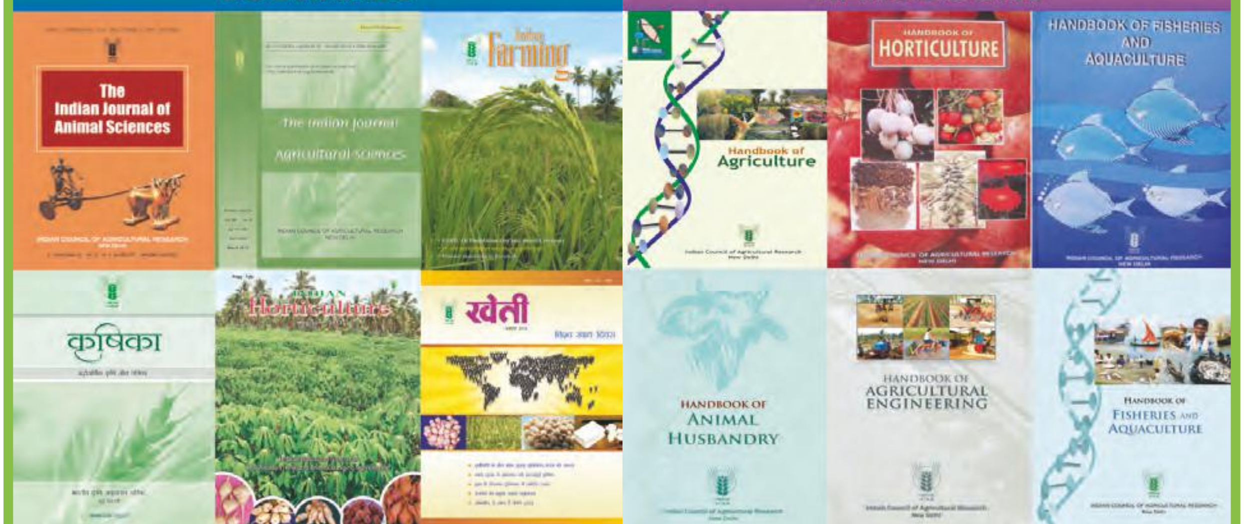

भाकृअनुप
ICAR

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें:
व्यवसाय प्रबंधक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-I, पूसा, नई दिल्ली 110 012
टेलिफैक्स: 91-11-25843657; ई-मेल: bmicar@icar.org.in
वेबसाइट: www.icar.org.in

आवरण पृष्ठ II का शेष

सारणी 1. फल एवं सब्जी आधारित समेकित कृषि प्रणाली अपनाने से पूर्व तथा बाद की स्थितियों में लागत व आय का आंकलन (वर्तमान प्रचलित मूल्य दरों पर)

क्र. सं.	कृषि उपक्रम	फल व सब्जी आधारित कृषि समेकित कृषि प्रणाली अपनाने के बाद					फल व सब्जी आधारित समेकित कृषि प्रणाली अपनाने से पूर्व				
		क्षेत्रफल (हैक्टर)	कुल वार्षिक लागत (रुपये)	कुल वार्षिक उत्पादन	कुल वार्षिक आय (रुपये)	शुद्ध वार्षिक आय (रुपये)	क्षेत्रफल (हैक्टर)	कुल वार्षिक लागत (रुपये)	कुल वार्षिक उत्पादन	कुल वार्षिक आय (रुपये)	शुद्ध वार्षिक आय (रुपये)
1.	फल उत्पादन	0.75	30,200.00	42 क्विं.	1,05,000.00	74,800.00	0.20	10,500.00	10 क्विं.	25,000.00	14,500.00
2.	सब्जी उत्पादन	0.45	62,300.00	54 क्विं.	1,10,500.00	48,200.00	0.15	20,700.00	14 क्विं.	28,644.00	7,944.00
3.	फसल उत्पादन	0.35	10,800.00	9 क्विं.	15,200.00	4,400.00	1.25	25,400.00	16 क्विं.	27,200.00	1,800.00
4.	दुग्ध उत्पादन	2 भैंस	75,400.00	3200 ली.	1,02,400.00	27,000.00	1 भैंस	35,000.00	1300 लीटर	41,600.00	6,600.00
5.	मत्स्य पालन	0.03	4,500.00	42 कि.ग्रा.	8,400.00	3,900.00	–	–	–	–	–
6.	मधुमक्खी पालन	15 कालोनी	4,000.00	40 कि.ग्रा.	20,000.00	16,000.00	–	–	–	–	–
7.	मशरूम उत्पादन	15 बैग	600.00	20 कि.ग्रा.	1,600.00	1,000.00	–	–	–	–	–
	योग		1,87,800.00		3,63,100.00	1,75,300.00		91,600.00		1,22,444.00	30,844.00

सूखे चारे के रूप में पशुओं के काम आते हैं। पशुओं से ही गोबर प्राप्त होता है, जिसकी खाद के बिना पर्वतीय मृदाओं में खेती बुरी तरह प्रभावित हो जाती है।

दुग्ध उत्पादन

श्री नंदन सिंह दुग्ध उत्पादन का कार्य पहले मात्र एक भैंस रखकर करते थे। वर्तमान में वे दो भैंसों से दुग्ध उत्पादन का कार्य कर रहे हैं। इस कार्य में वे कृषि विज्ञान केन्द्र व पशुपालन विभाग से समय-समय पर सलाह व सहायता लेते रहते हैं। वर्तमान में वे इस उपक्रम से 27,000 रुपये की शुद्ध वार्षिक आय प्राप्त कर रहे हैं। इसके अलावा गोबर से केंचुए की खाद (वर्मी कम्पोस्ट) बनाकर खेती को पुष्ट भी कर रहे हैं।

मत्स्य पालन

श्री सिंह ने अपनी कर्मठता व मत्स्य विभाग के सहयोग से मछली के छोटे-छोटे तालाब (पॉलीटैंक) 0.03 हैक्टर भूमि में बनाए हैं। इन तालाबों से वे प्रतिवर्ष 40 कि.ग्रा. कॉमन कार्प तथा ग्रास कार्प मछलियों का उत्पादन कर रहे हैं। इससे इन्हें 8,400 रुपये की कुल व 3,900 रुपये की शुद्ध आय अर्जित हो रही है। इसके अतिरिक्त इन

समेकित कृषि प्रणाली के अंतर्गत पॉलीहाउस एवं मछली पालन

सब्जी उत्पादन

पहले श्री सिंह मात्र 0.15 हैक्टर क्षेत्रफल में ही सब्जी उत्पादन का कार्य करते थे। वे मुख्य रूप से आलू का उत्पादन करते थे। वर्तमान दरों पर गणना करने से ज्ञात होता है कि यदि वे इसी प्रकार सब्जी उत्पादन कर रहे होते तो उन्हें 28,644 रुपए की कुल व 7,944 रुपए की शुद्ध आय प्राप्त होती। दूसरी ओर वर्तमान में वे सब्जी उत्पादन से 1,10,500 रुपये की कुल व 48,200 रुपये की शुद्ध आय अर्जित कर रहे हैं। सब्जी उत्पादन से होने वाली आय में यह धनात्मक परिवर्तन इस उपक्रम के लिए क्षेत्रफल बढ़ाने व कृषि विज्ञान केन्द्र की सलाह पर कम अवधि की बेमौसमी सब्जियों जैसे फूलगोभी, बंदगोभी, मटर, मूली, हरा धनिया, शिमला मिर्च की उन्नत प्रजातियों को भी परंपरागत सब्जियों के साथ सम्मिलित करने से संभव हो सका।

पॉलीटैंकों में प्राकृतिक स्रोत से लाकर एकत्रित किए गए पानी का इस्तेमाल बागवानी फसलों के उत्पादन में भी किया जा रहा है।

मधुमक्खी पालन

मधुमक्खियां सर्वश्रेष्ठ परागणकर्ता होती हैं। इस प्रकार का परागण बागवानी फसलों के लिए आवश्यक है। इनसे प्राप्त शहद से आय वृद्धि भी होती है। इन बातों को ध्यान में रखकर श्री सिंह द्वारा मधुमक्खियों की 15 कॉलोनियों का संचालन किया जा रहा है। इनसे 40 कि.ग्रा. शहद का वार्षिक उत्पादन हो रहा है। इस प्रकार वे 16,000 रुपये की शुद्ध आय प्राप्त कर रहे हैं।

मशरूम उत्पादन

श्री नंदन सिंह घर के खाली पड़े पुराने कमरे में बटन मशरूम का उत्पादन करने लगे हैं। प्रायोगिक रूप से शुरू किए गए इस उपक्रम से उन्हें प्रथम वर्ष में ही अच्छी फसल प्राप्त हुई। इस कार्य में दक्षता प्राप्त करने के उपरांत अब इनका इरादा इसे बढ़ाने का है, जिससे आय में और वृद्धि हो सके।

यदि हम श्री सिंह द्वारा फल एवं सब्जी आधारित समेकित कृषि प्रणाली को अपनाने में पूर्व व बाद की तुलना करते हैं तो आय में एक बहुत बड़ा अंतर वर्तमान मूल्य दरों पर भी पाते हैं। जहां उनके द्वारा पूर्व में की जा रही खेती से उन्हें मात्र 1,22,444 रुपये की कुल व 30,844 रुपये की शुद्ध आय प्राप्त होती थी। वहीं कृषि प्रणाली में सुधार कर वे अब 3,63,100 रुपये की कुल व 1,75,300 रुपये की शुद्ध आय प्राप्त कर रहे हैं। इस प्रकार वे एक सम्मानित जीवनयापन करते हुए अन्य कृषकों के लिए प्रेरणा स्रोत बन गए हैं।

स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि श्री सिंह ने अपनी कर्मठता, कृषि विज्ञान केन्द्र के तकनीकी मार्गदर्शन एवं अन्य कृषि विभागों के सहयोग से सफलता की नई इबारत लिखी है। वे अन्य कृषकों के लिए प्रेरणा स्रोत है। हमें आशा ही नहीं विश्वास है कि श्री सिंह जी की यह सफलता गाथा अन्य कृषकों को भी अपनी कृषि प्रणाली में सुधार कर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करेगी और भविष्य में कई अन्य कृषक श्री नंदन सिंह की तरह अपनी मेहनत, तकनीकी ज्ञान वृद्धि और सरकारी सहयोग से सबल बनकर राष्ट्र को समर्थ बनाएंगे।

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)–437

भा.कृ.अनु.प. के जर्नल्स एवं हैंडबुक्स

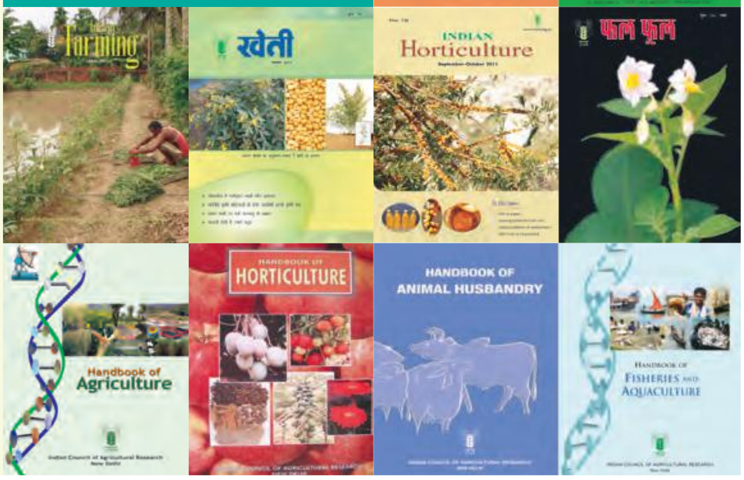

कृषि संबंधी स्वदेशी तकनीकी ज्ञान की सूची (सीडी)

भा.कृ.अनु.प. के प्रकाशन

संपर्क

व्यवसाय प्रबंधक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन-I, पूसा, नई दिल्ली 110 012

टेलीफैक्स : 91-11-25843657; ई-मेल : bmicar@icar.org.in

वेबसाइट : www.icar.org.in

भाकृअनुप ICAR

डा. एस. के. सिंह, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली 110 092 से मुद्रित। सम्पादकः अशोक सिंह